RAMA UNIVERSITY
www.ramauniversity.ac.in

किसान पत्रिका

भारतीय कृषि एवं कृषकों को समर्पित

वर्ष 1, अंक 1

मार्च – 2020

मूल्य : 45/–

कृषि विज्ञान एंव संबद्ध उद्योग संकाय
रामा विश्वविद्यालय, मंधना, कानपुर, उत्तर प्रदेश (भारत) 209217

किसान पत्रिका

किसान पत्रिका, कृषि विज्ञान एंव संबद्ध उघोग संकाय, रामा विश्वविद्यालय, कानपुर से हिंदी में प्रकाशित एक त्रैमासिक पत्रिका है। पत्रिका का मुख्य उद्देश्य है कृषकों को कृषि के विभिन्न क्षेत्रों में होने वाली नवीन अनुसंधानों, तकनीकों एंव धारणों से अवगत करना है ताकि वे नयी कृषि पद्धितियों को अपनाकर अपनी आय को और अधिक सबल बना सकें। इसके आलवा पत्रिका का अन्य उद्देश्य कृषि युवा वैज्ञानिको, लेखको एंव प्रगतिशील कृषकों को पत्रिका के माध्यम से अपनी राय एंव शोध कार्यो को प्रकाशित करने के लिए प्रोत्साहित करना हैं।

कृषि की विविध विधाओं, क्षेत्रों और अपार संभावनाओं को देखते हुए, पत्रिका के लेखों को निम्नवत् श्रेणियों में वर्गीकृत किया हैः

फसल उत्पादन जानकारीयॉ (धान्य, दलहन, रेशे, तेल, नगदी, फल एंव सब्जी वाली फसलें आदि)

फसल रोग एंव कीट प्रंबधन

फसल विपणन एंव नवीन संभावनऐं

जैविक खेती एंव प्रबंधन

नवीन कृषि प्राणलीयॅा

उपरोक्त के अतिरिक्त पत्रिका प्रकाशन हेतू कहानियों, कविताओं, कृषि बजट समीक्षा, साक्षात्कार और हमारे पाठक आधार के लिए प्रासंगिक अन्य लेखकों आदि को भी स्वीकार और प्रकाशित करती है।

हम सभी शोधकर्ताओं, कृषि से संबंधित छात्रों और पेशेवरों का स्वागत करते हैं कि वें अपने महत्वपूर्ण लेख तथा विचारों को हमें प्रकाशन हेतू भेजें और किसान पत्रिका के लेखक बनकर कृषक जगत को नयी दिशाओं में अग्रसित करने में हमारा सहयोग करें। हमें विश्वास है कि आपके योगदान और सुझाव किसान पत्रिका के सुधार और पाठको के मध्य पत्रिका को स्थापित करने में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाएगें। किसान पत्रिका के विशेषांक हर वर्ष मार्च, जून, सिंतबर और दिसंबर महीने में प्रकाशित होगें।

पत्र – व्यवहार :

प्रधान संपादक,

श्री राहुल सिंह राजपूत (सहायक प्राध्यापक, पादप रोग विभाग)
डॉ. कौशिक प्रसाद (सहायक प्राध्यापक, प्रसार शिक्षा)
कृषि विज्ञान एंव संबद्ध उद्योग संकाय
रामा विश्वविद्यालय, मंधना, कानपुर, उत्तर प्रदेश (भारत) 209217
ईमेल आईडीः rahulsinghr829@gmail.com; kaushik21293@gmail.com
संपर्क नंबरः 8005184476; 9721242356

अस्वीकरणः

लेखों में व्यक्त विचारों, जानकारियों, आंकड़ों आदि के लिए लेखक स्वयं उत्तरदायी हैं। उनसे रामा विश्वविद्यालय, कानपुर की सहमति आवश्यक नहीं है। पत्रिाका में प्रकाशित लेखों तथा अन्य सामग्री का कॉपीराइट अधिकार रामा विश्वविद्यालय, कानपुर के पास सुरक्षित है। इन्हें पुनः प्रकाशित करने के लिए लेखक की अनुमति अनिवार्य है। लेखों में संस्तुत रसायनों के मात्रा का प्रयोग करने से पहले विशेषज्ञों से सलाह अवश्य लें। लेखकों के योगदान के कारण उत्पन्न कोई भी विवाद उसकी एकमात्र जिम्मेदारी होगी और वाद–विवाद का निपटारण केवल कानपुर न्यायक्षेत्राधिकार के अधीन होगा।

संपादकीय मण्डल

मुख्य संरक्षक

डॉ. सूरज बाबू सिंह कुशवाह
कुलाधिपति, रामा विश्वविद्यालय, कानपुर

संरक्षक

डॉ. एस. पी. सिंह
अधिष्ठाता, कृषि विज्ञान एंव संबद्ध उद्योग संकाय, रामा विश्वविद्यालय

प्रधान संपादक

श्री आर. एस. राजपूत
सहायक प्राध्यापक, पादप रोग विभाग, कृषि विज्ञान एंव संबद्ध उद्योग संकाय, रामा विश्वविद्यालय

डॉ कौशिक प्रसाद
सहायक प्राध्यापक, प्रसार शिक्षा, कृषि विज्ञान एंव संबद्ध उद्योग संकाय, रामा विश्वविद्यालय

सह–संपादक

डॉ कृष्ण कुमार मिश्र
सहायक प्राध्यापक, उघान विभाग, कृषि विज्ञान एंव संबद्ध उद्योग संकाय, रामा विश्वविद्यालय

डॉ. बृजेश कुमार मिश्र
सहायक प्राध्यापक, पादप कार्यिकी, कृषि विज्ञान एंव संबद्ध उद्योग संकाय, रामा विश्वविद्यालय

डॉ. उदयभान सिंह
सहायक प्राध्यापक, पादप रोग विभाग, कृषि विज्ञान एंव संबद्ध उद्योग संकाय, रामा विश्वविद्यालय

डॉ. अरूण शंकर
सहायक प्राध्यापक, मृदा विज्ञान विभाग, कृषि विज्ञान एंव संबद्ध उद्योग संकाय, रामा विश्वविद्यालय

डॉ. अनीता यादव
सहायक प्राध्यापक, पादप प्रजनन एंव अनुंवाशिकी, कृषि विज्ञान एंव संबद्ध उद्योग संकाय, रामा विश्वविद्यालय

उप–संपादक

डॉ. अजय सिंह
सहायक प्राध्यापक, सस्य विज्ञान, कृषि विज्ञान एंव संबद्ध उद्योग संकाय, रामा विश्वविद्यालय

डॉ. कार्तिकेय बिसेन
सहायक प्राध्यापक, पादप रोग विभाग, कृषि विज्ञान एंव संबद्ध उद्योग संकाय, रामा विश्वविद्यालय

डॉ. शिव प्रकाश श्रीवास्तव
सहायक प्राध्यापक, पादप प्रजनन एंव अनुंवाशिकी, कृषि विज्ञान एंव संबद्ध उद्योग संकाय, रामा विश्वविद्यालय

उप–संपादक

इंजी. अरविंद वर्मा
सहायक प्राध्यापक, कृषि अभियांत्रिकी विभाग, कृषि विज्ञान एंव संबद्ध उद्योग संकाय, रामा विश्वविद्यालय

श्री अभिषेक तिवारी
सहायक प्राध्यापक, उद्यान विभाग, कृषि विज्ञान एंव संबद्ध उद्योग संकाय, रामा विश्वविद्यालय

श्री राजेश पाल
शिक्षण सहयोगी, मृदा विज्ञान, कृषि विज्ञान एंव संबद्ध उद्योग संकाय, रामा विश्वविद्यालय

श्री जितेन्द्र ओझा
शिक्षण सहयोगी, कृषि अर्थशास्त्र, कृषि विज्ञान एंव संबद्ध उद्योग संकाय, रामा विश्वविद्यालय

कु. अनामिका जैन
शिक्षण सहयोगी, जैव प्रौघोगिकी, कृषि विज्ञान एंव संबद्ध उद्योग संकाय, रामा विश्वविद्यालय

डॉ. दुजेश्वर कुर्रे
डॉक्टोरल फेलो, सस्य विज्ञान विभाग, कृषि विज्ञान संकाय, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणासी, उ0प्र0

पूजा कुमारी
डॉक्टोरल फेलो, जंतु विज्ञान विभाग, विज्ञान संकाय, बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणासी, उ0प्र0

संपादकीय सलाहकार

डॉ. एच. बी. सिंह
भूतपूर्व व्याख्यता, कवक एंव पादप रोग विभाग, कृषि विज्ञान संकाय, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणासी, उ0प्र0

डॉ. हरि हर राम
भूतपूर्व व्याख्यता (सब्जी प्रजनक), सब्जी विज्ञान विभाग, गो.ब.पं. कृषि एवं प्रौ. विश्वविद्यालय, पंतनगर, उतराखंड

डॉ. बी. एन. सिंह
भूतपूर्व निदेशक अनुसंधान, बिरसा कृषि विश्वविद्यालय, रांची, झारखंड

डॉ. प्रकाश सिंह
व्याख्यता, कृषि प्रसार शिक्षा, आचार्य नरेंद्र देव कृषि एंव प्रौघेगिकी विश्वविद्यालय, अयोध्या, उ0प्र0

डॉ. एस. पी. सिंह
सहायक प्राध्यपक, कवक एंव पादप रोग विभाग, कृषि विज्ञान संकाय, बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय, उ0प्र0

डॉ. भाग्यश्री खमारी
सहायक प्राध्यपक, पादप रोग विभाग, कृषि विज्ञान संकाय, शिक्षा ओ अनुसंधान, भुवनेश्वर, उोडीसा

डॉ रातुल मोनीराम
सहायक प्राध्यपक, पादप रोग विभाग, आचार्य नरेंद्र देव कृषि एंव प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, अयोध्या, उ0प्र0

डॉ. अनुकूल वैष्णव
मुख्य परियोजना अन्वेषक, एस.ई.आर.बी., पोस्ट डॉक्टोरल फेलो, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, उ0प्र0

संपादकीय

हम किसान पत्रिका के प्रथम संस्करण को कृषि विज्ञान एंव संबद्ध उद्योग संकाय, रामा विश्वविद्यालय, कानपुर द्वारा प्रकाशित करने तथा पाठको के मध्य लाने के लिए अत्यंत उत्साहित हैं। हमारे पहले अंक की रूपरेखा विषय हैः वर्तमान परिदृश्य में कृषकों को विभिन्न नवीन कृषि तकनीकों की जानकारी प्रदान करके, आय में वृद्धि तथा उनके जीवन स्तर में सुधार हेतु मार्ग प्रशस्त करना। किसान पत्रिका रामा विश्वविद्यालय, कानपुर से हिंदी में प्रकाशित एक त्रैमासिक पत्रिका है। कृषि विज्ञान एंव उद्योग संकाय, रामा विश्वविद्यालय, कानपुर निरंतर कृषि के विभिन्न क्षेत्रों में होने वाली नवीन अनुसंधानों पर ध्यान केंद्रित किया हुआ है एंव इसका लक्ष्य किसान पत्रिका के माध्यम द्वारा युवा कृषि वैज्ञानिको तथा प्रगतिशील कृषकों के लेखों, उनके विचारो को कृषकों के मध्य प्रस्तुत करना हैं। किसान पत्रिका प्रतिवर्ष मार्च, जून, सिंतबर और दिसंबर के महीने में प्रकाशित होगी। हम किसान पत्रिका प्रथम संस्करण में आपका स्वागत करते हैं एंव आशा करते हैं कि आपको इस पत्रिका के माध्यम से हम कृषि एंव उससे जुडी नवीन जानकारीयों को देने में सफल हो सकेगें।

हम अपने सभी संपादकों, संपादकीय मंडल सदस्यों, तकनीकि सहायकों एंव लेखकों कों को धन्यवाद देना चाहते हैं साथ ही साथ हम सभी शोधकर्ताओं और कृषि से संबंधित छात्रों और पेशेवरों से आग्रह करते हैं कि वें अपने महत्वपूर्ण लेख तथा विचारों को हमें प्रकाशन हेतू भेजें और कृषक जगत को नयी दिशाओं में अग्रसित करने में हमारा सहयोग करें। हमें विश्वास है कि आपके योगदान और सुझाव किसान पत्रिका के सुधार और पाठको के मध्य स्थापित करने में एक महत्वपूर्ण भूमिका अदा करेगें।

सादर

संपादकीय सदस्य

प्रकाशित लेखों की सूची

क्रं.	लेख	लेखक का नाम
1.	मिर्च की फसल हेतु समन्वित नाशी जीव प्रबंधन	भूपेश जोशी एवं वी. के. सोनी
2.	गुलदाउदी की संरक्षित खेती	सुमित पॉल, अनिल सिंह, रागिनी मौर्या एंव दीप्ती श्रीवास्तव
3.	सूक्ष्म सिंचाई प्रणालीः प्रतिबूंद अधिक फलोत्पादन एवं जल उपयोग क्षमता बढ़ाने में कृषि हेतु लाभकारी तकनीक	प्रमोद कुमार, अश्वनी कुमार वर्मा एवं कैरोविन लाकर
4.	मृदा सुधारक के रूप में प्रेसमड का कृषि में महत्व	प्रशांत देव सिंह, प्रमोद कुमार एंव सोमेंद्र वर्मा
5.	ऊसर मिट्टी का प्रबंधन स्वस्थ एंव सफल फसलोत्पादन हेतु	अरूण शंकर, राजेश पाल एंव उदयभान सिंह
6.	जैव नियंत्रक *ट्राईकोडर्मा* संवधर्न की कृषक उपयोगी आसान विधि एंव अनुप्रयोग	राहुल सिंह राजपूत एंव डॉ. एच. बी. सिंह
7.	वर्मीकम्पोस्ट निर्माण की विधि एंव कृषि में महत्व	पवन कुमार शर्मा, प्रदीप कुमार, अजय कुमार
8.	संरक्षित कृषि मे प्लास्टिक का उपयोग एंव महत्व	याशिका मल्होत्रा
9.	मशरूम उत्पादनः– छोटे किसानों की आय का उत्तम स्त्रोत	अजय चौरसिया, कुलदीप एंव अंकित कुमार
10.	*ट्राइकोडर्मा* – जैविक खेती में उपयोगी कवक	गायत्री भदौरिया, रिया यादव
11.	कीटनाशकों का पर्यावरण एवं मानव स्वास्थ्य पर प्रभाव	समीर कुमार सिंह एवं कँचन गंगाराम पडवल
12.	दोगुनी किसान आय : चुनौतियां एवं उपाय	भारतेंदु यादव, विशाखा यादव एंव कौशिक प्रसाद
13	हाइटेक बागवानी से अधिक आय और कृषक उद्यमिता का विकास	सुमित एंव संदीप यादव

मिर्च की फसल हेतु समन्वित नाशी जीव प्रबंधन

भूपेश जोशी* एवं वी.के.सोनी
संत कबीर कृषि महाविद्यालय एवं अनुसंधान केन्द्र,
कवर्धा (कबीरधाम), छत्तीसगढ़
*ई मेल:- bhupeshjoshi89@gmail.com

परिचय:–

मिर्च की खेती भारत में सत्रहवीं शताब्दी के मध्य से हो रही है। इसकी पैदावार न सिर्फ आंतरिक उपयोग हेतु अपितु निर्यात हेतु भी तैयार होती है। छत्तीसगढ़ में भी सब्जी उत्पादन में इसकी खेती प्रमुखता से की जाती है। इस व्यवसायिक फसल के विपुल उत्पादन में बाधक सर्वाधिक महत्वपूर्ण कीट समस्या है। ये कीट फसल को कमजोर बीमारी युक्त एवं बौनी बना देते है। जिससे पैदावार कम हो जाती है।

प्रमुख कीट :–

1. **रसाद कीट (थ्रिप्स):–** ये काफी छोटे और सक्रिय होते है। इनके पंख झालरदार होते है। शिशु एवं प्रौढ़ काले रंग के होते है। शिशु एवं प्रौढ़ पत्तियों एवं फूलों से रस चूसते हैं। इस कारण पत्तियां जगह–जगह पीली एवं धब्बेदार हो जाती है। प्रकोपित पौधों में फल्लियां कम लगती हैं।
2. **माहो:–** ये एफिड विषाणु बीमारी के रोगवाहक होते है। इस एफिड के शिशु एवं वयस्क समूह में पत्तियों की निचली सतह से तथा पौधे के कोमल अंगों से रस चूसते हैं जिससे पौधे कमजोर पड़ जाते है। पत्तियां पीली पड़कर अंत में सूख कर गिर जाती है।
3. **माइट:–** माइट के शिशु एवं प्रौढ़ काफी छोटे होते है। इनका रंग चमकीला लाल होता है इसलिए इसे लाल मकड़ी भी कहा जाता हैं। ये माइट पत्तियों की निचली सतह पर जाला बनाकर रहती है तथा पत्तियों से रस चूसती रहती है। इस कारण पत्तियां धीरे–धीरे पीली पड़कर अंत में सूख जातीहै। माइट से ग्रसित पौधे में फल छोटे एवं संख्या में कम लगते हैं।
4. **मिर्च का फल बेधक:–** छोटी इल्लियां हरे पदार्थ को खुरचकर खाती हैं। बड़ी इल्लियां बोंडी, फूलों, फल्लियों को नुकसान पहुंचाती हैं। फल्लियों के उभरे हुए भाग में छेद करके इल्लियां बढ़ते हुए दानों को खाती हैं। एक इल्ली अपने जीवनकाल में 30–40 फल्लियों को नुकसान पहुंचाती है।
5. **सफेद मक्खी:–** इस कीट के शिशु एवं प्रौढ़ हल्के पीले रंग के होते हैं जो पत्तियों की निचली सतह पर बैठे रहते हैं। प्रौढ़ कीट के पंख सफेद रंग के होते हैं। शिशु एवं प्रौढ़ दोनों ही पौधों की पत्तियों से रस चूसते हैं जिससे पौधों की बढ़वार रूक जाती है तथा फलों का आकार घट जाता हैं। साथ ही साथ फलों की संख्या भी कम हो जाती है।

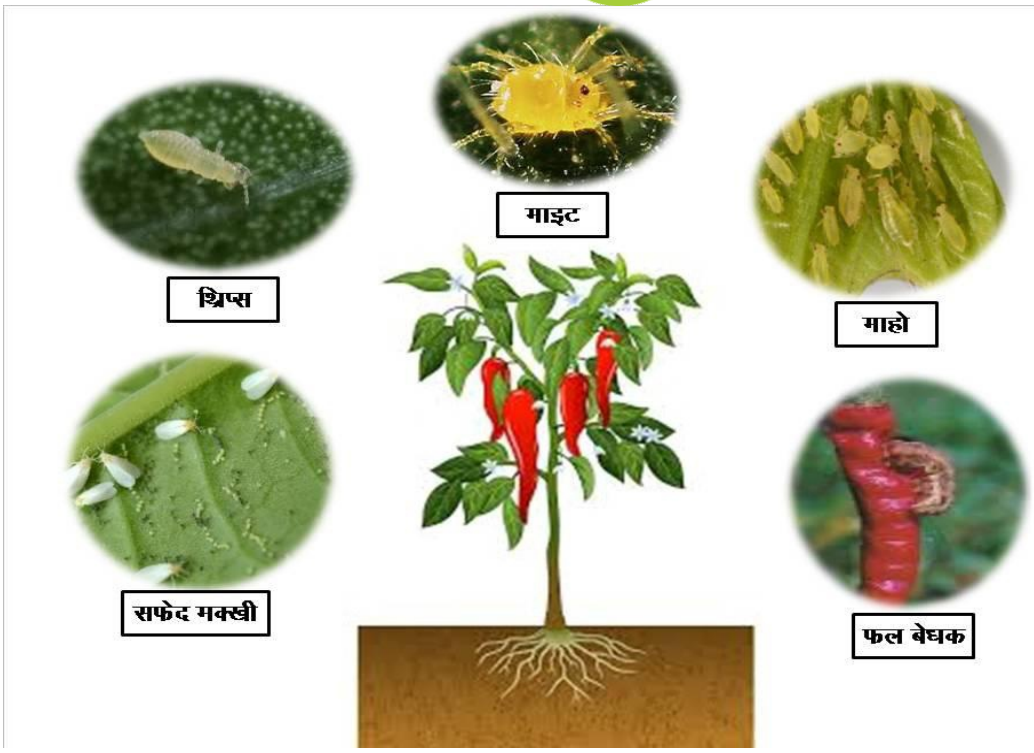

हानिकारक कीटों का सर्वेक्षणः–

1. फसल पर हानिकारक कीट एवं मित्र कीटों की संख्या के आंकलन हेतु खेत में सामान्य दृष्टिगत निरीक्षण अंकुरण के बाद प्रति सप्ताह के अंतराल पर करें।
2. मिर्च के फल बेधक एवं तम्बाकू इल्ली इत्यादि के निरीक्षण हेतु फेरोमोन प्रपंच या प्रकाश प्रपंच का उपयोग करें।
3. पीला पान या स्ट्रीकी ट्रेप (चिपचिपा) प्रपंच 10 प्रति हेक्टेयर की दर से स्थापित कर सफेद मक्खी एवं थ्रिप्स इत्यादि का निरीक्षण किया जा सकता है।

3. आर्थिक क्षति स्तर (ई.टी.एल.)

क्र.	हानिकारक कीट	–	आर्थिक क्षति स्तर
1.	थ्रिप्स	–	6 थ्रिप्स प्रति पत्ती या 10 प्रतिशत ग्रसित पौधे।
2.	एफिड	–	2 से 5 शिशु प्रति पत्ती
3.	माइट	–	5 से 10 माइट प्रति पत्ती
4.	मिर्च का फल बेधक	–	एक अण्डा या एक इल्ली या एक ग्रसित फल प्रति पौधा

4. समन्वित नाशी कीट प्रबंधन के उपाय

अ. सस्य क्रियाओं द्वाराः–

1. **स्वच्छ खेतीः–** पूर्व फसल की कटाई के पश्चात् फसल अवशेषों को नष्ट करें तथा खेत को खरपतवार रहित बनाएं। बुवाई हेतु स्वस्थ बीज (प्रमाणित बीज) एवं रोपों (पौधे) का उपयोग करें।
2. फसल पर कीट व्याधि के प्रकोप को कम करने हेतु फसल चक्र में सेम तथा अनाज फसलें शमिल करें। अंतवर्तीय फसल के रूप में गेंदा, प्याज, लहसून लें।
3. ग्रीष्मकालीन गहरी जुताई द्वारा कीटों के अण्डे, शंखी एवं इल्लियां तेज धूप एवं परभक्षी पक्षियों द्वारा नष्ट कर दिए जाते है।
4. नर्सरी में पौध की रोपाई उचित समय पर अच्छी तरह तैयार क्यारियों में पर्याप्त दूरी पर करें। उर्वरकों का अनुशंसित संतुलित मात्रा में उपयोग करें। नत्रजनयुक्त उर्वरकों का आवश्यकता से अधिक उपयोग रस चूसक कीटों की प्रकोप वृद्धि में सहायक होता है।

ब. यांत्रिक क्रियाओं द्वाराः–

1. नाशी कीटों के अण्ड समूह, इल्लियां, ग्रब तथा शंखी इत्यादि को एकत्रित कर नष्ट करें।
2. पौधे के ग्रसित भागों, शाखाओं एवं फलों को तोड़कर नष्ट करें।
3. यथासंभव यलो पान या स्ट्रीकी ट्रेप का उपयोग करें।
4. फलबेधक हेतु प्रकाश प्रपंच या फेरोमोन प्रपंच का उपयोग करें।
5. फसल को रोपाई के 4 से 6 सप्ताह तक निदाई गुड़ाई की समयबद्ध क्रिया द्वारा खरपतवार रहित बनाए रखें।

जैविक कीट नियंत्रण विधि द्वाराः–

1. संरक्षणः– एफिड के परजीवी कीट एफीडियस जाति एवं एफेलिनस जाति आदि तथा कुछ प्रमुख सामान्य परभक्षी कीट जैसे काक्सीनेलिड भृंग, सर्फिड, मकड़ी, केरेबिड भृंग स्टोफाइलिनिडिस, ड्रेगन फ्लाई, डेम्सफ्लाई मिरिड बग, पेन्टाटोमिड बग, नेबिड बग, परभक्षी थ्रिप्स इत्यादि भी नाशी कीटों की संख्या को नियंत्रित रखने में सहायक होते है। अतः इन परभक्षी एवं परजीवी कीटों के संरक्षण हेतु कीटनाशी रसायनों का सुरक्षित एवं वैज्ञानिक सलाह के अनुसार उचित मात्रा एवं संख्या में प्रयोग करें।
2. परभक्षी एवं परजीवी कीटों के पोषण एवं वृद्धि हेतु खेत की मेढ़ पर चना, मसूर आदि फसल लगाएं।

3. पक्षियों के बैठने हेतु आई.पी.एम. पेग टी (अक्षर) आकार की खूंटियां 50 खूंटी प्रति हेक्टेयर की दर से इल्लियों को नष्ट करने हेतु लगाएं।

स. जैविक नियंत्रण साधनों द्वाराः–

1. फल बेधक हेतु ट्राइकोग्रामा ब्रेजिलेंसिस या ट्राइकोग्रामा चिलोनिस के 50000 अण्डे 5 से 6 बार प्रति हेक्टेयर की दर से फसल पर छोड़े।
2. क्राइसोपरला कार्निया के 2 ग्रब (इल्ली) प्रति पौधे की दर से फल बेधक एवं माहू के नियंत्रण हेतु फसल पर छोड़े।
3. नीम बीज चूर्ण 5 प्रतिशत का पानी में घोल बनाकर रस चूसक कीटों के नियंत्रण हेतु फसल की प्रारंभिक अवस्था में छिड़काव करें।

द. रासायनिक कीटनाशकों द्वाराः–

समन्वित नाशी जीव प्रबंधन के सिद्धांत के अनुसार कीटनाशी रसायनों का उपयोग कीट प्रबंधन हेतु अंतिम उपाय या विकल्प के रूप में ही करना चाहिए। मित्र कीट, मानव तथा पशुओं की दृष्टि से सुरक्षित कीट नाशी रसायनों का वैज्ञानिक अनुशंसित मात्रा एवं समय पर नाशी कीट संख्या के आर्थिक क्षति स्तर से अधिक होने पर उपयोग करें।

1. **रस चूसक कीटों हेतु :–** कार्बोफ्युरान 1 कि.ग्रा. सक्रिय तत्व प्रति हेक्टेयर की दर से फसल की प्रारंभिक अवस्था में छिड़काव करें।

2- बेधक कीट हेतुः– इण्डोसल्फान 35 ई.सी.1000 मि.ली. या क्विनालफास 25 ई.सी. 1000 मि.ली. प्रति हेक्टेयर की दर से छिड़काव करें। या इण्डोसल्फान 1000 मि.ली. प्रति हेक्टेयर या साइपरमेथ्रिन 500 मि.ली. प्रति हेक्टेयर की दर से छिड़काव करें। 15 दिनों के अंतराल पर एक के बाद एक छिड़काव दोहरायें।

गुलदाउदी की संरक्षित खेती

[1]सुमित पॉल*, [2]अनिल सिंह, [1]रागिनी मौर्या एंव [1]दीप्ती श्रीवास्तव

[1]शोध छात्र, उद्यान विज्ञान विभाग, कृषि विज्ञान संकाय, बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी, उत्तर प्रदेश

[2]व्याख्यता,, उद्यान विज्ञान विभाग, कृषि विज्ञान संकाय, बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी, उत्तर प्रदेश

***ई मेल:-** sumitpal4725@gmail.com

परिचयः–

गुलदाउदी (*डेनड्रेथिमा ग्रेन्डीफ्लोरा*) एस्टरेसी कुल का एक महत्वपूर्ण शरद ऋतु में उगाया जाने वाला कार्तित पुष्प हैक्राइसेन्थिमम के नाम से भी जाना जाता है। इसके फूल विभिन्न रंगों (लाल, सफेद ,पीले, नारंगी इत्यादि) के होते हैं। इसकी रंगीन सुन्दर पंखुड़ियां उगते हुए सूरज के समान प्रतीत होती हैं। जापान में इस पुष्प के नाम से क्राइसेन्थिमम त्योहार भी मनाया जाता है। यह पुष्प भारत में व्यावसायिक रुप से उगाने हेतु चुने गये शीर्ष पांच पुष्पों में से एक है। गुलदाउदी की खेती भारत में पुराने समय से की जा रही है परन्तु ये पुष्प भी अन्य पुष्पों की तरह शरद ऋतु में भी उपलब्ध रहता है, अतः इसकी वार्षिक उपलब्धता को बढ़ाने के हेतु संरक्षित खेती अति उपयुक्त है। वर्तमान में इसकी संरक्षित खेती विभिन्न गैर संस्थागत संस्थानों, किसानों तथा कम्पनियों द्वारा दिल्ली, कोलकाता, बंगलुरु, पुणे तथा ऊंटी में बड़े पैमाने पर की जाती है।विष्व पुष्प बाजार में इसकी बढ़ती मांग को पूरा करने हेतु इसकी संरक्षित खेती किसानों के लिए लाभदायक होगी।साथ ही साथ विदेषी मुद्रा को अर्जित करके भारतीय अर्थव्यवस्था को मजबूत बनाने का एक सफल तरीका हो सकता है।

गुलदाउदी की संरक्षित खेती के फायदेः–

इसकी संरक्षित खेती के निम्नलिखित फायदे है–

1. संरक्षित खेती द्वारा उगाये गये पुष्प अधिक दृढ़ एवं ज्यादा समय तक गुलदान अवधि तक रखने वाले होते हैं।
2. पुष्पों में रोग, कीट व कार्यिकी विकार बहुत की कम लगते हैं जिससे गुणवत्ता युक्त पुष्पों का उत्पादन होता है।
3. पुष्पों का आकार एक सामान होता है जिससे निर्यात हेतु आसानी रहता है।

चित्रः– गुलदाउदी की संरक्षित खेती

चित्रः– गुलदाउदी के विभिन्न प्रकार के पुष्प

जलवायुः–

इसकी खेती हेतु उचित जलवायु को बनाये रखना चाहिए। इसकी वानस्पतिक वृद्धि हेतु 12 घण्टे प्रतिदिन प्रकाश की आवश्यकता होती है। वहीं पुष्प निकलते समय इसकी 11 घण्टे या इससे कम प्रकाश की आवश्यकता होती है। कृत्रिम प्रकाश विद्युत बल्ब (150 वाट) से दिया जा सकता है। गर्मी के दिनों में जब

तापमान बढ़ने लगे तब प्रकाश की प्रबलता 7000 लक्स से नीचे ही रखनी चाहिए। इसकी खेती हेतु 16–18^0 सेन्टीग्रेड तापमान ही आदर्ष होता है, 12–16^0 सेन्टीग्रेड तापमान वानस्पतिक वृद्धि हेतु तथा पुष्पन हेतु 16–18^{0}तापमान उपयुक्त होता है। यदि तापमान 35^0 के ऊपर हो जाता है तब पुष्पों का रंग फीका पड़ने लगता है, वहीं पुष्पों का आकार भी छोटा हो जाता है।

मृदा का चुनावः–

गुलदाउदी की सफल संरक्षित खेती हेतु अच्छी जल निकास वाली बलुई दोमट मिट्टी का चयन करना चाहिए। मृदा का पी. एच. 7–7.5, उपयुक्त जल धारण क्षमता वाली तथा जीवाश्म युक्त होनी चाहिए।

मिट्टी की तैयारीः–

गुलदाउदी की संरक्षित खेती हेतु मृदा का खरपतवार एवं मृदा जनित रोगों से मुक्त होना अति आवश्यक है। इसके लिए मिथाइल ब्रोमाइड का प्रयोग रोपाई से पूर्व करना लाभप्रद है। मृदा की संरचना तथा जलधारण क्षमता बढ़ाने हेतु सड़ी हुई गोबर की खाद को मिट्टी में मिलाते हैं। चूंकि गुलदाउदी उथली जड़ों वाली पौधा है। इसलिए गोबर की खाद को केवल मिट्टी की उपरी सतह (25 सेमी) में ही मिलाते हैं।

प्रवर्धनः–

गुलदाउदी को निम्नलिखित प्रकार से प्रवर्धित किया जा सकता है।

1. **बीज द्वारा** – एक वर्षीय किस्मों को बीज द्वारा प्रवर्धित किया जाता है। बीजों को फरवरी माह में पौधषाला में लगा देना चाहिए तथा 15 दिनों के बाद इसका प्रतिरोपण मुख्य क्यारियों अथवा गमलों में कर देना चाहिए।
2. **भू–स्तारियों द्वारा** – फरवरी माह में जब गुलदाउदी के पुष्प खत्म हो जाते हैं तब पौधों से कल्ले निकालकर 10 सेमी0 व्यास के गमलों में लगा देना चाहिए। गमलों में गोबर की सड़ी हुई खाद को 2:1 के अनुपात में मिला देना चाहिए।

कलम द्वाराः–

कलम द्वारा प्रवर्धन हेतु रोग रहित/कीट रहित मातृ पौधे की कलम को लगाना गुलदाउदी प्रवर्धन की श्रेष्ठ विधि है। इस विधि में पौधों की जड़ों के पास निकलने वाले भूस्तारियों के शीर्ष की दो से तीन पत्तियां छोड़कर बाकी पत्तियां तोड़ देते है, तत्पश्चात् कलमों को पौधषाला में रोप देते हैं। कलम लगाने के 20–25 दिन उपरान्त पौधें प्रतिरोपण के लिए तैयार हो जाते हैं। जड़ों के शीघ्र विकास हेतु पौधों की जड़ों को आई.बी.ए. 25 पीपीएम से उपचारित कर देते हैं।

उन्नत प्रजातियांः–

हरित गृहों में प्रमुख रुप से गुलदाउदी को कर्तित पुष्पों के लिए उगाया जाता है। उन्नत प्रजातियों में मुख्यतः अर्का पिंक स्टार, अर्का रवि, चन्द्रकान्त, इन्दिरा, नीलिमा, राखी, ऊषा किरण, अर्का गंगा, अर्का स्वर्णा, चन्द्रिका, कीर्ति, पंकज, रविकिरण, येलो गोल्ड एवं पूर्णिमा इत्यादि है।

इनके अतिरिक्त उपयोगिता के आधार पर गुलदाउदी की प्रजातियों को दो श्रेणियों में बांटा गया है।

1) बिना डंडे वाली या माला बनाने वाली प्रजातियां– बग्गी, बीरबल साहनी, मीरा, शान्ति, बसन्ती तथा जया इत्यादि।

2) डंडे वाली या गुलदस्ता बनाने वाली प्रजातियां– कुन्दन, अप्सरा, पूर्णिमा, कार्कटिका, चार्लिया जयन्ती।

खरपतवार नियंत्रणः–

हरित गृह में खरपतवारों को दरकिनार नहीं किया जा सकता, ये मृदा से नमी एवं पोषक तत्वों को ग्रहण करते हैं। फलस्वरुप पौधों को पोषक तत्वों की प्राप्ति नहीं हो पाती है। अतः खरपतवार नियंत्रण इनकी प्रारम्भिक अवस्था में ही करना चाहिए।

सिंचाईः–

गुलदाउदी के पौधों को लगातार नमी की आवश्यकता होती है। अतः पौधों की सिंचाई समय पर करनी चाहिए तथा इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि पौधों में पानी अधिक समय तक नहीं न रुके, क्योंकि पौधों की अच्छी वृद्धि के केवल हल्की नमी की आवश्कता होती है।

प्रजातियॉः–

उपयोगिता के आधार पर गुलदाउदी की दो प्रजातियॉ होती है।

बिना डंडे वाली जातियॉ या माला बनाने हेतु :– बग्गी, बीरबल साहनी, मीरा, शान्ती, बसन्ती तथा जया।

डंडे वाली जातियॉ या गुलदस्ते हेतु :– कुंदन, अप्सरा, पूर्णिमा, चार्लिया, जयन्ती।

पौधों को सहारा देनाः–

गुलदाउदी के पौधों से अच्छे तथा बड़े आकार के पुष्प प्राप्त करने के लिए किनारे वाली शाखाओं को खपच्चियॉ से सहारा देना अतिआवश्यक है। गमलो में डंडियों को बाहर की ओर रखते है। इस प्रकार पौधों को बडने तथा फूलने के लिए पर्याप्त स्थान मिल जाता है।

पिचिंगः–

यह क्रिया पौधों को छोटा रखने, अधिक शाखाओं वाला तथा अधिक सख्यां में फूल प्राप्त करने हेतु की जाती है। इस क्रिया में उसे 5 सेमी0 लम्बाई से पौधें के ऊपरी हिस्से (फनगी) को हाथ से तोड दिया जाता है। इसके फलस्वरूप किनारे स`अधिक शाखऍ बनती है तथा प्रति पौधे से अधिक संख्या में फूलों की प्राप्ती होती है।

कलियों को तोड़ना :–

कलियों को तोड़ने की क्रिया गुलदाउदी के पौधों से बड़े आकार के अच्छे फूल प्राप्त करने के लिए की जाती है। इस क्रिया में पौधे पर कुछ कलियों को छोड़कर शेष को काट दिया जाता है।

डीसकरिंगः–

इस क्रिया में पौधें की जड़ो के पास से निकलने वाली शाखाओं को काट देते हैं। इसका प्रमुख उद्देश्य पौधों की दी जाने वाली खाद से उर्वरक की उपयोग क्षमता को बढाना एवं किस्म के अनुरूप पुष्प प्राप्त करना होता है।

पादप सुरक्षा उपायः–

कीटः–

एफिड़ः–यह कीट पौधें से रस चूसकर पुष्पन को प्रभावित करता है तथा पुष्प आकार में छोटें तथा घाटियॉ किस्म के रह जाते है।

रोकथामः–इस कीट की रोकथाम के लिए एसीटमीप्राइड़ का छिडकाव 0.3 ग्राम प्रति लीटर की दर से करना चहिए।

थ्रिप्सः— यह कीट नई पत्तियों को खाते है। जिससे पत्तियॉ सूख जाती है। फूलों का रंग उड़ जाता है तथा वह सूख जाते है।

रोकथामः— इसकी रोकथाम हेतु नीम के कड़े को माइक्रोझाइम के साथ मिलाकर अच्छी तरह से मिलाकर 250 मि0ली0 का छिड़काव करना चाहिए।

माहूः— यह कीट पौधों से रस चूसते है तथा विषाणु जनित रोगों को फैलाते है। इस कीट की रोकथाम हेतु 0.2 प्रतिशत मैलाथियान का प्रयोग करते है।

रोग नियंत्रणः—

किरीटः—यह एक जीवाणु जनित रोग है। इस रोग में पत्तियों तथा तने में गोल तथा खुरदरें गॉल उत्पन्न होने लगते हैं, तथा मिट्टी प्रदूषित ह ोजाती है। इस प्रकार संक्रमित पौधें और मिट्टी रोग को अन्य पौधों में फैलाते है। इस रोग की रोकथाम हेतु रोगी पौधों को नष्ट कर देतें है।

उकढ़ाः—इस रोग के लक्षण सर्वप्रथम पौधें की निचली पत्तियों पर दिखायी देतें हैं। पत्तियों का रंग पीला पड़ जाता है, तथा वे मुड़ कर सूखने लगती है।

रोकथामः—इस रोग की रोथाम हेतु संक्रमित पौधों को नष्टकर देना चाहिए तथा विल्टरोधी पौधों को ही अधिक्रित नर्सरी से खरीदना चाहिए।

तनासड़नः—

इस रोग में तने के निचले हिस्से पर काले रंग को संरचना दिखाई पड़ती है, पत्तियॉ पीली होकर सड़ने लगती है तथा गम्भीर परिस्थितियों में पौधा सड़ने लगता है।

रोकथामः—

चूर्णिल आसिताः—इस रोग का प्रकोप होने पर सफेद रंग का चूर्णिल पदार्थ पत्तियों की ऊपरी तथा निचली सतह पर दिखाई देने लगता हैं।

रोकथामः— इस रोग को रोकथाम के लिए सल्फर का 2 ग्राम प्रति लीटर की दर से छिडकाव करना चाहिए।

कार्मिकों विकारः—

अंधापन (ब्लाइंडनेस) :—गुलदाउदी में पुष्प कलिकाओं के अवतरन के समय अगर रात्रि का तापमान अत्यन्त कम एवं दिन की अवधि कम होने लगती है, फलस्वरूप पुष्प की मध्य पंखुडियॉ अविकसित रह जाती है। अतः पुष्प भी पूर्ण रूप से नही खिलता।

पुष्पों की कटाईः—गुलदाउदी के पुष्पों की कटाई उनके पूर्ण विकसित होने पर ही करते है। कटाई के लिए सुबह का समय अतिउपयुक्त होता है। स्प्रे गुलदाउदी के पुष्पों को पूर्ण रूप खिल जाने पर तथा स्टैंडर्ड गुलदाउदी के पुष्पों की बाहरी पखुडियॉ खुलने पर ही तोडाई करते है।

सस्योत्तर प्रबन्धः—

पुष्पों की कटाई के उपरान्त उन्हें पानी से भरी बल्टियों में रखना चाहिए तथा उन्हें गुणवत्ता के अधार पर श्रेणीबद्ध करके गुच्छों में बाधकर रखना चाहिए। स्टैण्डर्ड प्रकार के फूलों को सोसायटी आफ अमेरिकन फ्लोरेट्स के अनुसार निम्न प्रकार श्रेणीबद्ध किया जाता है।

भण्डारणः– गुलदाउदी के पुष्पों को भण्डारग्रह में 2–3 सेल्सियस तापमान पर 15 दिनों तक रखा जा सकता है। पुष्पों को अन्य स्थानों पर ले जाने के दौरान पानी का समय–समय पर छिडकाव करते रहना चाहिए।

श्रेणी	पुष्प का औसत व्यास (मि0मी0)	पुष्प वृत्त की औसत लम्बाई (सेमी0)
नीली	140–142	75–77
हरी	100–103	60–63
पीली	120–123	75–77

उपजः–

गुलदाउदी के पुष्पों की उपज किस्मों तथा जलवायु पर निर्भर करती है परन्तु सामान्यः स्प्रे प्रकार की गुलदाउदी से 1 हेक्टेयर क्षेत्र में 100000–150000 पुष्प तथा स्टैण्डर्ड प्रकार की गुलदाउदी से 15–20 पुष्प वृत्त प्रति पौधें की उपज प्राप्त होती है।

सूक्ष्म सिंचाई प्रणाली: प्रतिबूंद अधिक फलोत्पादन एवं जल उपयोग क्षमता बढ़ाने में कृषि हेतु लाभकारी तकनीक

[1]प्रमोद कुमार*, [2]अश्वनी कुमार वर्मा एवं [3]कैरोविन लाकर

[1]शोध छात्र, सस्य विज्ञान विभाग, च.शे.आ.कृषि एवं प्रौधोगिक विश्वविद्यालय, कानपुर
[2]शोध छात्र, कृषि प्रसार विभाग, च.शे.आ.कृषि एवं प्रौधोगिक विश्वविद्यालय, कानपुर
[3]शोध छात्र, सस्य विज्ञान विभाग, च.शे.आ.कृषि एवं प्रौधोगिक विश्वविद्यालय, कानपुर

***ई मेल:-** pramodcsauat@gmail.com

परिचय :–

कृषि पर निर्भर देश होने के नाते सिंचाई भारत की रीढ़ की हड्डी है और भारत की 50–52 प्रतिशत आबादी अपनी आजीविका हेतु कृषि और उससे संबंधित कार्यों पर निर्भर है। लिहाजा, भारत में कृषि हमेशा से मुख्य उधम रही है और भविष्य में भी रहेगी। देश में कृषि मुख्य रूप पर वर्षा पर आधारित है। विश्व के सम्पूर्ण जल संसाधनों का केवल 4 प्रतिशत जल भारत में पाया जाता है। भारत, विश्व के 16 प्रतिशत आबादी को खाद्य एवं पोषण प्रदान करता है। आने वाले समय में तीव्र गति से बढ़ती जनसँख्या, शहरीकरण, असंतुलित ढंग से सिंचाई के पानी का उपयोग और औधोगिकीकरण के कारण कृषि के लिए पानी की उपलब्धता काफी काम जाएगी। इस प्रकार बढ़ती आबादी के खाद्य एवं पोषण लिए पर्याप्त खाद्यान उत्पन्न करना हमारे देश के प्रबंधकों और शोधकर्ताओं के लिए एक चुनौतीपूर्ण लक्ष्य होगा। इस संबंध में सूक्ष्म सिंचाई प्रणाली की भूमिका महत्वपूर्ण हो सकती है।

सूक्ष्म सिंचाई प्रणाली :–

बदलते परिदृश्य में सूक्ष्म सिंचाई प्रणाली को जल उपयोग दक्षता बढ़ाने वाली तकनिकी के रूप में देखा जा रहा है। सूक्ष्म सिंचाई प्रणाली एक उन्नत विधि है जिसके प्रयोग से सिंचाई जल की पर्याप्त बचत की जा सकती है। सूक्ष्म सिंचाई प्रणाली के अंर्तगत मुख्य रूप से दो विधियाँ प्रचलित है जिसका नाम क्रमशः फव्वारा या स्प्रिंकलर सिंचाई तथा बूंद–बूंद या ड्रिप सिंचाई।

फव्वारा या स्प्रिंकलर सिंचाई–

यह सिंचाई करने की ऐसी विधि है, जिसमें पानी को हवा में कृत्रिम वर्षा के रूप में छिड़काव करके फसलों की सिंचाई की जाती है। पानी का छिड़काव दबाव द्वारा छोटी नोजल के सहायता से किया जाता है। स्प्रिंकलर में लगी नोजल पानी को फुआर के रूप में बहार फेकती है। स्प्रिंकलर हमेशा घूमता रहता है जिससे उसके क्षेत्र में आने वाली फसलों की सिंचाई की जा सकती है। वर्तमान समय में 45.30 लाख हेक्टेयर भूमि में स्प्रिंकलर सिंचाई का प्रयोग किया जा रहा है। इस विधि द्वारा गेहूँ, चना, मूंगफली, तम्बाकू, कपास व अन्य अनाज वाली फसलों की आसानी से सिंचाई की जा सकती है इसके अलवा घास के मैदानों, पार्कों व सजावटी पौधों में भी इस विधि द्वारा सिंचाई की जा सकती है।

स्प्रिंकलर सिंचाई से होने वाले लाभ :–

कम वर्षा वाले क्षेत्रों में स्प्रिंकलर सिंचाई बहुत अधिक प्रचलित है जिसके द्वारा पानी की लगभग 30–50 प्रतिशत तक बचत की जा सकती है। सामान्यतः स्प्रिंकलर सिंचाई सूखाग्रस्त, बलुई मिटटी, ऊँची–नीची जमीन तथा पानी की कमी वाले क्षेत्रों के लिए उपयोगी है। इस विधि में सतही सिंचाई की विधियों के अपेक्षा जल प्रबंधन आसान होता है। फसलों में कीटों एवं बिमारियों का कम प्रकोप होता है क्योंकि इस विधि द्वारा कीटनाशी एवं रोगनाशी दवाइयों का छिड़काव बेहतर ढंग से किया जा सकता है। इस विधि द्वारा फसलों की पोषक तत्व सम्बंधित आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए घुलनशील उर्वरकों का भी प्रयोग किया जा सकता है।

स्प्रिंकलर सिंचाई में बाधाए :–

हवा की गति तेज होने कारण पानी का वितरण समान नहीं हो पता है चिकनी मिटटी एवं गर्म हवा वाले क्षेत्रों में इस विधि द्वारा सिंचाई नही की जा सकती है। इस विधि के सही उपयोग के लिए लगातार जलापूर्ति एवं अधिक ऊर्जा की आवश्यकता होती है।

सारणी 1– फव्वरा सिंचाई विधि के अंतगर्त पानी की बचत एवं पैदावार में बढ़ोतरी

क्र. सं.	फसल का नाम	पानी की बचत (प्रतिशत)	पैदावार वृद्धि (प्रतिशत)
1	गेहूँ	35	24
2	जौ	56	16
3	बाजरा	56	19
4	कपास	36	50
5	चना	69	57
6	ज्वार	55	34
7	सूर्यमुखी	33	20

स्रोत– खेती, आईसीएआर 2016

टपक या ड्रिप सिंचाई पद्धति :–

यह एक ऐसी पद्धति है, जिसमें प्लास्टिक के पाइप द्वारा पौधे के तने के चारों ओर भूमि पर या जड़ विकास क्षेत्र में ड्रिपर की सहायता से बूंद–बूंद कर पानी दिया जाता है जिससे पानी की प्रत्येक बूंद पौधों के उपयोग में आ सके। पानी के लिए एक प्लास्टिक या सीमेंट का बना हुआ मुख्य टैंक होता है जिससे प्लास्टिक का मोटा पाइप जुड़ा होता है। इसी में पानी खींचने की मोटर लगी होती है जो पानी को ड्रिप लाइन में दबाव से पहुँचता है। ड्रिप सिंचाई पद्धति में जल को पाइप लाइन तंत्रों की सहायता से पौधों के जड़ क्षेत्र के आसपास आवश्यकता अनुसार दिया जाता है। इस प्रणाली में बूंद–बूंद द्वारा फसलों व बागवानी पौधों की सिंचाई की जाती है।सिंचाई की इस विधि का प्रयोग कर 30–40 प्रतिशत तक उर्वरकों की बचत, 70 प्रतिशत तक पानी की बचत के साथ उपज में 100 प्रतिशत तक वृद्धि की जा सकती है इसके अलवा ऊर्जा की खपत में भी कमी होती है।

टपक या ड्रिप सिंचाई से होने वाले लाभ :–

इस पद्धति द्वार सिंचाई करने पर 70–75 प्रतिशत तक सिंचाई जल की बचत होती है क्योंकि सिंचाई जल सतह पर बहकर और मृदा में जड़ क्षेत्र से नीचे नहीं जाता है। इस पद्धति द्वार सिंचाई करने पर जल उपयोग दक्षता 80–95 प्रतिशत तक बढ़ाया जा सकता है जिसके फलस्वरूप उत्पादकता एवं फसलों की गुणवत्ता में सुधार होता है। ड्रिप सिंचाई द्वारा जमीं का बहुत काम क्षेत्र नम होता है अतः खेत में खरपतवार का प्रकोप कम होता है। इस विधि में जल्दी–जल्दी सिंचाई करने के कारन जड़ क्षेत्र में अधिक नमी रहती है जिससे लवणों की सांद्रता हानिकारक स्तर से काम रहती है। ड्रिप सिंचाई विधि सभी प्रकार के मृदाओं के लिए उपयोगी होता है। सिंचाई जल के साथ दिए गए उर्वरकों का लीचिंग और डिनाइट्रीफिकेशन द्वारा कम हानि होती है अतः यह प्रणाली उर्वरक उपयोग दक्षता बढ़ाने में भी सहायक है।

सारणी 2– टपक सिंचाई विधि के अंतगर्त पानी की बचत एवं पैदावार में बढ़ोतरी

क्र. सं.	फसल का नाम	पानी की बचत (प्रतिशत)	पैदावार वृद्धि (प्रतिशत)
1	पपीता	60	75
2	अंगूर	50	90
3	नींबू	80	35
4	गन्ना	50	30
5	कपास	55	30
6	मूंगफली	40	70
7	भिंडी	40	15
8	बैगन	55	20

स्रोत– खेती, आईसीएआर 2016

सारणी 3–सिंचाई की विभिन्न विधियों में जलक्षमता

क्र. सं.	सिंचाई प्रणाली	जल दक्षता(प्रतिशत)
1	बार्डर	30
2	कुंड	33
3	क्यारी	35
4	ड्रिप	98
5	फव्वरा	50

स्रोत– इंडियन फार्मिंग, 2016

निष्कर्ष :–

सूक्ष्म सिंचाई तकनीकों को आम जनता, किसानों व प्रसारकर्मियों में और अधिक लोकप्रिय बनाने की आवश्यकता है, ताकि संरक्षणपूर्ण प्रौधोगिकियों के प्रयोग से बेहतर जल प्रबंधन एवं जल उपयोग क्षमता को अधिक लाभप्रद बनाया जा सके।कम पानी वाले क्षेत्रों में ड्रिप सिंचाई प्रणाली अपनानी चाहिए। इससे पानी के अनावश्यक अपव्यय को काफी हद तक कम किया जा सकता है जिससे भावी पीढ़ी को पर्याप्त सिंचाई जल के साथ सुरक्षित जल भंडार भी प्राप्त हो सके।

मृदा सुधारक के रूप में प्रेसमड का कृषि में महत्व

[1]प्रशांत देव सिंह*, [2]प्रमोद कुमार एंव [3]सोमेंद्र वर्मा

[1]शोध छात्र, मृदा विज्ञान एवं कृषि रसायन, स.व.प.कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, मेरठ

[2]शोध छात्र, सस्य विज्ञान विभाग, च.शे.आ. कृषि एवं प्रौधोगिक विश्वविद्यालय़ कानपुर

[3]शोध छात्र, फल विज्ञान विभाग, च.शे.आ. कषि एवं प्रौधोगिक विश्वविद्यालय़ कानपुर

*ई मेल:- prashantdeosingh486@gmail.com

परिचय :

भारत एक कृषि प्रधान देश है, जिसकी आधीआबादी गाँवों में रहती है एवं अपने जीवन यापन के लिए कृषि एवं उससे सम्बंधित कार्यों पर रहती है। हरित क्रांति के परिणाम स्वरुप फसल उत्पादन बढ़ाने के लिए रासायनिक उर्वरकों एवं कीटनाशकों का भारी मात्रा में प्रयोग किया गया, जिससे मृदा गुणवत्ता का ह्रास हुआ है, इसके साथ ही अन्न की गुणवत्ता में गिरावट एवं हमारा पर्यावरण प्रदूषित हुआ है। अतः इन सभी समस्याओं से निजात पाने के लिए रासायनिक उर्वरकों एवं कीटनाशकों का प्रयोग काम करके जैविक खादों का प्रयोग कर सकते है। इस दृष्टि से प्रेसमड एक विकल्प हो सकता है। इस जैविक उर्वरक को लगाने से रासायनिक कीटनाशकों के निरंतर और अत्यधिक उपयोग के कारण प्रभावित मिट्टी को नियंत्रण में लाया जाता है।

प्रेस मड क्या है ?

प्रेसमड, चीनी मिलों में गन्ने के रस के उपचार से प्राप्त एक नरम, स्पंजी एवं गहरे भूरे रंग का अवशेष है गन्ने के कुल वजन का 2 प्रतिशत प्रेसमड निकलता हैं। इसे गन्ना फिल्टर प्रेस मड, गन्ना फिल्टर केक मड और गन्ना फिल्टर केक भी कहा जाता है। दरअसल, पौधे के पोषण के लिए आवश्यक कार्बनिक पदार्थों और खनिज तत्वों की काफी मात्रा होने के कारण, प्रेसमड का उपयोग पहले ही कई देशों में उर्वरक के रूप में किया जा चुका है, जिसमें ब्राज़ील, भारत, ऑस्ट्रेलिया, क्यूबा, पाकिस्तान, ताइवान, दक्षिण अफ्रीका और अर्जेंटीना शामिल हैं। प्रेसमड मिट्टी की उर्वरता को बनाए रखने एवं फसल उत्पादन को बढ़ाने के लिए उपयोग किया जाता है क्योंकि इसमें सूक्ष्म पोषक तत्वों के साथ–साथ आवश्यक पौष्टिक पोषक तत्व अर्थात, कार्बनिक कार्बन, नाइट्रोजन, फास्फोरस, पोटेशियम, कैल्शियमएवं मैग्नीशियम शामिल हैं। इसलिए मिट्टी की उर्वरता बढ़ाने और फसल उत्पादकता में सुधार के लिए इस जैविक खाद का लाभकारी प्रभाव अच्छी तरह से स्थापित है।

प्रेस मड खाद के पोषक तत्व :

प्रेस मड खाद की संरचना मिट्टी की स्थिति, गन्ने की किस्मों, गन्ने की आपूर्ति की अवधि और भौगोलिक विविधताओं पर काफी भिन्न होती है। प्रेसमड खाद में पाये जाने वाले पोषक तत्व इस प्रकार निम्नलिखित है –

क्रमांक	पोषक तत्व	औसत मात्रा/100 ग्राम प्रेस मड (%)
1	कार्बनिक मिश्रण	50
2	कैल्शियम	11
3	फास्फोरस	2–3
4	पोटैशियम	1–2
5	नाइट्रोजन	1.5–2.5
6	मैगनीशियम	1.0
7	सल्फर	0.3
8	सेलूलोज़	11.4
9	हेमी सेलुलोज	10
10	लिग्निन	9.3
11	प्रोटीन	15.5
12	मोम	8.4

तालिका से स्पष्ट है कि प्रेसमड खाद में पौधे के पोषण के लिए आवश्यक कार्बनिक पदार्थों के साथ–साथ आवश्यक पौष्टिक पोषक तत्व जैसे–कार्बनिक कार्बन, नाइट्रोजन, फास्फोरस, पोटेशियम, कैल्शियम एवं मैग्नीशियम इत्यादि पाये जाते है। इसके साथ ही प्रेस मड खाद में विभिन्न प्रकार के सूक्ष्म पोषक तत्व जैसे– जिंक, आयरन, कॉपर एवं मैगनीज इत्यादि भी पाये जाते है जो मृदा स्वास्थ्य और पौधों के वृद्धि एवं विकास को बढ़ाने में मदद करते है।

मिट्टी के गुणों पर प्रेसमड का प्रभाव

भौतिक गुण :

कृषि मृदा की तिल्ठ, उर्वरता और उत्पादकता को बनाए रखने के लिए कार्बनिक पदार्थ जैसे कि प्रेसमड कम्पोस्ट, म्युनिसिपल बायो सॉलिड्स, पशु खाद और फसल के अवशेषों का नियमित रूप से उपयोग सबसे महत्वपूर्ण है। प्रेसमड या फिल्टर केक चीनी उद्योग के महत्वपूर्ण कार्बनिक उपोत्पाद में से एक है जो मिट्टी को पर्याप्त मात्रा में पौधों को पोषक तत्वों की आपूर्ति करने में सक्षम है।इसके अनुकूल प्रभाव के कारण ही मृदा के भौतिक गुणों जैसे– मिट्टी की बनावट, संरचना, जल धारण क्षमता, मिट्टी के छिद्र, हाइड्रोलिक गुणों, मिट्टी का घनत्व इत्यादि गुणों में सुधार होता ह। प्रेस मड के प्रयोग से मिट्टी के पारिस्थितिकी तंत्र के भौतिक वातावरण और स्वास्थ्य में सुधार होता है जिसके कारण टिकाऊ कृषि के लिए महत्वपूर्ण सहायता प्राप्त होता है। प्रेसमुड के प्रयोग से भारी मिट्टी में वायु के प्रवाह और जल निकासी में सुधार होता है, जबकि रेतीले मिट्टी में यह जलधारण क्षमता में सुधार करने में मदद करता है। जब इसे कृषि क्षेत्रों में उपयोग किया गया तो इससे कारण गन्ने की पैदावार में वृद्धि हुई, रस की गुणवत्ता में सुधार हुआ और मृदा की शक्ति में वृद्धि हुई।

रासायनिक गुण :

सल्फेशन प्रक्रिया से प्राप्त प्रेस मड अम्लीय प्रकृति का होता है इसलिए इसे क्षारीय मिट्टी के सुधार के लिये प्रयोग किया जाता है जबकि कार्बोनेशन प्रक्रिया से प्राप्त प्रेस मड में चूना होता है जो अम्लीय मिट्टी में सुधार के लिये उपयोगी होता है। प्रेसमुड में बड़ी मात्रा में कार्बनिक पदार्थ एवं महत्वपूर्ण सूक्ष्म पोषक तत्वों जैसे जस्ता, तांबा, लोहा और मेंगनीज की प्रचुर मात्रा होती है, इसलिए, प्रेस मड़ से सूक्ष्म पोषक तत्वों के वितरण में सुधार होगा और मिट्टी प्रणाली के लिए लाभदायक माइक्रोबियल गतिविधियों में वृद्धि होगी। कार्बनिक पदार्थ के रूप में प्रेसमड धनायन विनिमय क्षमता को बढ़ाता है और अपघटन के दौरान कैल्सियम,

मैग्नीशियम एवं पोटैशियम धनायन जैसे पोषक तत्वों उत्पादन के साथ ही उन उत्पादित धनायन को 90 प्रतिशत तक मृदा के सोखने की शक्ति को बढ़ाता है।

प्रेसमड कम्पोस्ट के रूप में अधिक स्थिर कार्बनिक नत्रजन स्रोतों का निरंतर अपघटन, एक निरंतर अवधि में मिट्टी में उपलब्ध नत्रजन के बाद के खनिजकरण को नियंत्रित करता है जो कि मिट्टी के रोगाणुओं द्वारा आंशिक जैविक स्थिरीकरण द्वारा संतुलित होता है और यह संतुलन पौधों के उपयोग के लिए उपलब्ध नत्रजन का एक अवशिष्ट स्रोत प्रदान करता है। प्रेसमड में पोटाश और फास्फोरस में अधिक मात्रा में पाया जाता है, अतः जब हम प्रेसमुड को खेत में प्रयोग करते है तो पोटाश मोबिलाइजिंग बैक्टीरिया (फ्रिटोरिया औरोरंटिया) और फॉस्फेट सोलुबिलाइजिंग बैक्टीरिया प्रेस मड में उपस्थित पोटैशियम एवं फास्फोरस की उपलब्धता को बढ़ा देते है जिसके कारण पौधों की वृद्धि एवं विकास और मृदा स्वास्थ्य में सुधार होता है

जैविक गुण:

प्रेसमड जैसे औद्योगिक कचरे को मिट्टी में जैविक कार्बन को बढ़ाने के लिए उर्वरक के रूप में लिया जाता है इसके उपयोग से मिट्टी में कार्बनिक कार्बन एवं विभिन्न प्रकार के पोषक तत्वों का समावेश मिटटी में होता है । प्रेसमड के आवेदन ने मिट्टी की बैक्टीरिया और कवक की आबादी को बहुत बढ़ा दिया। कृषि मृदा में प्रेसमड के अनुप्रयोग द्वारा फफूंद, जीवाणु और एक्टिनोमाइसेट्स आबादी में वृद्धि पौधों की वृद्धि और विकास के लिए पोषक तत्वों को जारी करने के लिए कार्बनिक पदार्थों के अपघटन में उनकी भूमिका को चिह्नित करती है। इसके अलावा, प्रेसमड से उपचारित मिट्टी में उच्च कार्बनिक बायोमास और नाइट्रोजन सामग्री माइक्रोबियल एंजाइमी गतिविधियों के कारण मिट्टी कार्बनिक पदार्थ सामग्री में परिवर्तन दिखाती है। प्रेसमड खाद में किसी भी पदार्थ को शामिल नहीं किया जाता है जो माइक्रोबियल कार्रवाई के लिए प्रतिकूल है। इसमें पौधे के विकास के नियामक, हार्मोन, ऑक्सिन, एंजाइम और विटामिन भी शामिल हैं जिसके परिणामस्वरूप मृदा वातन और बेहतर जड़ प्रसार में सुधार होता है।

स्थायी फसल उत्पादन पर प्रेसमड का प्रभाव:

हमारी मृदा में कम कार्बनिक पदार्थ होने के कारण मृदा स्वास्थ्य बिगड़ जाता है, प्रतिवर्ष हजारों टन प्रेसमड का उत्पादन किया जाता है प्रेसमड का उत्पादन चीनी उद्योग और पर्यावरणविदों के लिए बड़ी समस्या है। हाल ही में, इसका उपयोग कृषि में जैविक उर्वरक स्रोत के रूप में और फसल उत्पादन के लिए किया जा रहा है। प्रेसमड कार्बनिक प्रकृति होने के कारण कार्बनिक कार्बन और मैक्रो एवं सूक्ष्म पोषक तत्वों का अच्छा स्रोत हैं और पर्यावरणीय समस्यायों से निपटने के लिए इसका पुनरावर्तन किया जा सकता है, इस प्रकार आर्थिक विकास और पर्यावरण संरक्षण के बीच संतुलन बनाए रखा जा सकता है। कृषि क्षेत्र में प्रेस मड का उपयोग ने मिट्टी की कार्बन और नाइट्रोजन सामग्री को बढ़ाकर मृदा के उत्पादन क्षमता में काफी सुधार किया है । प्रेस मड से संशोधित मिट्टी की कार्बन– नाइट्रोजन अनुपात में बड़ोत्तरी कर लाभदायक सूक्ष्मजीवों के क्रियाशीलता वृद्धि करता है ।

शोध में पाया गया है कि सिंगल सुपर फास्फेट की तुलना में प्रेसमड कंपोस्ट का प्रयोग ने गेहूं (20–48 %) और मूँग (12–90%) में फास्फोरस उपयोग दक्षता में वृद्धि की। यह पाया गया कि प्रेसमड खाद ने प्रोटीन और कैल्शियम मात्रा को बढ़ाकर अनाज की गुणवत्ता बढ़ा दी। प्रेसमड कोनत्रजन, फास्फोरस और पोटैशियम उर्वरकों के साथ गन्ने पर लागू किया और गन्ने की उपज में काफी वृद्धि हुई। प्रेसमड को जैविक संशोधन के रूप में खेतों में प्रयोग किया गया, जिससे मिट्टी की कार्बनिक पदार्थ सामग्री को बढ़ाता है, मिट्टी की भौतिक स्थितियों में सुधार करता है और मिट्टी कंडीशनर के रूप में भी कार्य करता है।इन स्थापित तत्यों के आधार पर यह निष्कर्ष निकलता है कि बदलते वातावरण में फसलों और मिट्टी की उत्पादकता को बनाए रखने के लिए एक बहुत अच्छा जैविक उर्वरक का स्रोत हो सकता है।

ऊसर मिट्टी का प्रबंधन स्वस्थ एंव सफल फसलोत्पादन हेतु

[1]अरुण शंकर*, [1]राजेश कुमार पाल एंव [1]उदय भान सिंह
सहायक प्राध्यापक, कृषि विज्ञान एंव संबद्ध उघोग संकाय,
रामा विश्वविद्यालय, कानपुर, उत्तर प्रदेश
***ई मेलः-** aspauldh@gmail.com

परिचयः–

भारत में गंगा के मैदानी इलाकों के शुष्क और अर्ध–शुष्क क्षेत्रों में मिट्टी का ऊसर होना एक बड़ी समस्या है। इन क्षेत्रों में ऊसर प्रभावित मिट्टी का एक बड़ा हिस्सा गरीब छोटे किसानों की भूमि पर आता है। एक अनुमान (मंडल एट अल 2010) के अनुसार, भारत में 37.8 लाख हेक्टेयर भूमि ऊसर हैं। ऊसर मिट्टी में विनिमय–योग्य सोडियम लवण होते हैं जो क्षारीय जलीय विश्लेषण पैदा करने में सक्षम होते हैं। इस तरह की मिट्टी को पुराने साहित्य में क्षार मिट्टी कहा जाता है। ऊसर मिट्टी में 25° सेल्सीयस तापमान पर विद्युत चालकता 4 मात्रक से कम, विनिमेय सोडियम प्रतिशत (ईएसपी) 15 से अधिक और सोडियम अवशोषण अनुपात 13 से अधिक होता है। ज्यादातर सोडियम विनिमेय रूप में होते हैं । मिट्टी में बहुत कम मात्रा में मुक्त लवण मौजूद होते हैं । मिट्टी का पीएच 8.5 से अधिक होता है। । इन मिट्टी में सिंचाई के परिणामस्वरूप, क्षारीय स्थिति और पीएच मानों में दृढ़ता से विकास हो सकता है जो पीएच 10 या 10 से अधिक हो सकता है ।

ऊसर मिट्टी में कार्बनिक पदार्थ फैल जाता है और सतह पर जम जाता है, जिससे सोडिक मिट्टी भूरे–काले रंग की दिखाई देती है और कभी–कभी काली क्षार मिट्टी के रूप में जानी जाती है । इन मिट्टी को उत्तर प्रदेश में **ऊसर,** पंजाब में **कल्लर** और गुजरात में **क्षार** के रूप में भी जाना जाता है।

केंद्र और राज्य सरकारों द्वारा मिट्टी के क्षरण की जाँच और कृषि भूमि उत्पादकता कार्यक्रमों के माध्यम से कृषि उत्पादकता बढ़ाने के लिए कई प्रयास किए गए हैं। वर्तमान में, भारत प्रतिवर्ष लगभग 11 मिलियन टन कृषि उत्पादन खो रहा है, जिसका मूल्य ऊसर मिट्टी से 150 बिलियन प्रतिवर्ष है। ऊसर समस्या की गंभीरता ने नीति निर्माताओं और विकास एजेंसियों का ध्यान आकर्षित किया। भारत में ऊसर भूमि पुनर्विकास तकनीक में एक महत्वपूर्ण प्रगति हुई है, जो कि ऊसर मिट्टी को पुनः खेती योग्य बनाने और किसानों की आय में सुधार के लिए फसल उत्पादकता बढ़ाने के लिए बनाई गई है।

ऊसर मिट्टी के संशोधन के लिए आमतौर पर जिप्सम रसायन इसकी प्रचुरता, उपलब्धता और कम लागत के कारण इस्तेमाल जाता है । रासायनिक रूप से जिप्सम $CaSO_4$-$2H_2O$ है और बड़े पैमाने पर प्राकृतिक रूप से पाया जाता है । भारत में 1000 टन से अधिक जिप्सम जमा होने का अनुमान लगाया गया है। जिप्सम का उपयोग बंजर भूमि–सुधार तथा फसल उत्पादकता में वृद्धि के लिए सफलतापूर्वक किया गया है । चावल–गेहूं प्रणाली के तहत ऊसर मिट्टी के पुनर्ग्रहण के लिए कृषि–प्रौद्योगिकी पर आधारित जिप्सम–अनुप्रयोग।

भाकृअनुप–केंद्रीय मृदा लवणता अनुसंधान संस्थान, करनाल के माध्यम से चावल–गेहूं की फसल प्रणाली के लिए 1980 के दशक के उत्तरार्ध में उत्तर पश्चिम भारत की ऊसर मिट्टी को पुनः खेती के योग्य बनाने के लिए के लिए व्यावहारिक और निम्नलिखित व्यवहार्य पुनर्ग्रहण तकनीक विकसित किया गया था।

क) पहले कदम के रूप में उचित भूमि समतलन सुनिश्चित करें।

ख) उचित भूमि समतलन के बाद जिप्सम उपयोग से पहले, सिंचाई या बारिश के साथ 10 दिनों की अवधि के लिए जल जमाव द्वारा मिट्टी से अतिरिक्त लवण को बाहर निकालना सुनिश्चित करें। यह गर्मियों के दौरान सबसे कुशलता से पूरा किया जा सकता है। यह कदम घुलनशील लवण और घुलनशील कार्बोनेट का घुल कर बह जाना सुनिश्चित करेगा।

ग) जिप्सम खुराक (मिट्टी परीक्षण के आधार पर गणना), मिट्टी के शीर्ष 10 से.मी. में समान रूप से प्रसारित करें।

घ) फिर से भारी सिंचाई लागू करें ताकि घुलनशील लवण अन्य प्रतिक्रिया उत्पाद जड़ क्षेत्र से घुल कर बह जाएं। यह सुनिश्चित करने के लिए भूमि को लगभग 15 दिनों तक जल जमाव में रखें।

ङ) पानी की पूर्ण निकासी और मिट्टी में इष्टतम नमी की स्थिति प्राप्त करने के बाद, पारंपरिक जुताई के बाद हरी खाद विशेष रूप से ढैंचा उगाएं। लगभग 45–50 के बाद दिन, चावल की रोपाई से 2–3 दिन पहले ढैंचा को मिट्टी में मिला दें।

च) निम्नलिखित कारणों से पुनर्वसन में पहली फसल के रूप में चावल को प्राथमिकता दें।

1) चावल मिट्टी मिट्टी में लवण के उच्च स्तर को सहन कर सकता है और बिना किसी भी महत्वपूर्ण उपज नुकसान के 50 ईएसपी का सामना कर सकता है ।

2) चावल की जड़ों का जलमग्न होना और जैविक गतिविधियाँ कार्बन डाइआक्साइड के आंशिक दबाव को बढ़ाती हैं जिससे कैल्सियम की घुलनशीलता बढ़ जाती है। एक कैल्सियम आयन दो सोडियम आयनों को मिट्टी के धनायन विनिमय निकाय से विस्थापित करता है जिससे मिट्टी की ई.एस.पी. कम जाती है तथा मिट्टी का भौतिक पुनर्निमाण आरंभ हो जाता है।

3) अन्य फसलें जलमग्न परिस्थितियों को सहन नहीं कर सकती हैं।

4) चावल की जड़ों की उपस्थिति में कार्बनिक पदार्थों का फैलाव कम हो जाता है जिससे जल जमाव के बावजूद कार्बनिक पदार्थ मिट्टी में बने रहते हैं।

छ) अगले रबी मौसम में, गेहूं को दूसरी फसल के रूप में उगाया जा सकता है ताकि आर्थिक प्राप्त हो सके।

किसान के खेतों में मृदा पुनर्ग्रहण तकनीक के सफल अनुप्रयोग ने कई राज्यों को संसाधन–गरीब किसानों के भोजन और आजीविका सुरक्षा को बढ़ाने के लिए आवश्यक आदान प्रदान करके भूमि पुनर्ग्रहण और विकास निगमों के माध्यम से भूमि पुनर्ग्रहण के महत्वाकांक्षी कार्यक्रम शुरू करने के लिए प्रोत्साहित किया है। पिछले कुछ दशकों में, विश्व बैंक, यूरोपीय संघ और अन्य विकासात्मक एजेंसियों के समर्थन से, भारत ने 19.5 लाख हेक्टेयर ऊसर मिट्टी का पुनर्विकास किया है, जिसने लाखों छोटे किसानों की आर्थिक स्थिति में सुधार करने में महत्वपूर्ण योगदान दिया है।

जैव नियंत्रक *ट्राइकोडर्मा* संवर्धन की कृषक उपयोगी आसान विधि एवं अनुप्रयोग

[1]राहुल सिंह राजपूत* एंव [2]डॉ. एच.बी. सिंह
[1]सहायक प्राध्यपक, रामा विश्वविधालय, कानपुर
[2]पूर्व व्याख्यता, कवक एवं पादप रोग विज्ञान विभाग, कृषि विज्ञान संस्थान,
काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी, उत्तर प्रदेश
***ई मेल:-** rahulsinghr829@gmail.com

परिचय :–

देश में जैव नियंत्रक *ट्राइकोडर्मा* का उत्पादन विभिन्न कम्पनियां करती है, जो बाजार में कई नामों से उपलब्ध हैं। साथ ही उत्तर प्रदेश सरकार भी विभिन्न परियोजनाओं के तहत कृषकों को *ट्राइकोडर्मा* सस्ती दरों पर उपल्बध करा रही है। वैसे *ट्राइकोडर्मा* का उत्पादन कृषक भाई स्वयं घरेलू विधि द्वारा भी कर सकते है। मुख्य रूप से कम्पोस्ट/वर्मी कम्पोस्ट, जो पादप व जन्तु पदार्थों के विघटन के परिणामस्वरूप उत्पादित होती है। सूक्ष्मजीवी जीव, जैसे कवक एंव जीवाणु जो प्रत्येक स्थान पर विद्यमान होते हैं, इनके योगदान से कार्बनिक पदार्थ का विघटन होता है और ये सूक्ष्म जीव कार्बनिक पदार्थों जैसे : पत्तियों, फसलों के अवशेष, फलों के छिलके, गोबर इत्यादि को उसके मूल रूप से बदलकर गाढ़े भूरे रंग के कम्पोस्ट के रूप में परिवर्तित कर देते हैं। इस कम्पोस्ट का प्रयोग पादप वृद्धि तथा मृदा की गुणवत्ता में सुधार के लिए किया जाता है। इसके प्रयोग से पारम्परिक रूप से मृदा की संरचना व उसकी जल संचयन और पादप पोषक तत्व संचय करने की शक्ति बढ़ जाती है। फसल उत्पादन व उसकी गुणवत्ता बढ़ाने में कम्पोस्ट का प्रयोग एक सस्ता व सरल साधन है क्योंकि कम्पोस्ट मृदा संरचना व उर्वरता को बढ़ाता है जिसका प्रभाव लम्बे समय तक बना रहता है। स्वस्थ मृदा, जिसमें कि कार्बनिक पदार्थ की मात्रा अधिक होती है, पौधों की बढ़वार अच्छी होती है जिससे उत्पादन भी अच्छा प्राप्त होता है।

उपर्युक्त परम्परागत कम्पोस्ट को कृषकों के उपयोग हेतु टिकाऊ एवं और लाभप्रद बनाने के लिए कवक एवं पादप रोग विज्ञान विभाग, कृषि विज्ञान संस्थान, वाराणसी एवं सी0एस0आई0आर0– राष्ट्रीय वनस्पति अनुसंधान संस्थान, लखनऊ के वैज्ञानिकों द्वारा *ट्राइकोडार्मा* संर्वधन की सरल विधि विकसित की गयी है। शोध में यह पाया गया है कि हरी पत्तियों की खाद तथा अन्य पशुओं के गोबर की खाद की अपेक्षा गाय के गोबर की खाद पर पर्यावरण मित्र फफूंदीनाशक जैव नियंत्रक *ट्राइकोडर्मा* के उपनिवेशन की प्रक्रिया तुलनात्मक दृष्टिकोण से जल्दी होती है एवं उत्पादन गुणवत्ता युक्त होता है।

उत्पादन विधि :–

ट्राइकोडर्मा उत्पादन की घरेलू ग्रामीण विधि में हम कण्डों (उपलों) का प्रयोग करते हैं। किसी छायादार स्थान पर कण्डों को कूट–कूट कर, भुर–भुरा बना करके, उसमें उसी अनुपात में पानी मिला लिया जाता है। तत्पश्चात् उसे हाथों से अच्छी तरह से मिलाया जाता है जिससे कि कण्डे का ढेर गाढ़ा भूरा दिखाई पड़ने लगता है। अब इस ढेर में उच्चकोटि का *ट्राइकोडर्मा* शुद्ध कल्चर मिलाते हैं। इस ढेर को

पुराने जूट के बोरे से अच्छी तरह से ढक देते हैं और बोरे को ऊपर से पानी से भिगो देते हैं। समय–समय पर पानी का छिड़काव बोरे के ऊपर करते रहते हैं, जिससे कि ढेर में उचित नमी बनी रहे। 7–10 दिन बाद ढेर को फावड़े या हाथ से नीचे तक अच्छी तरह से मिलाते हैं और पुनः बोरे से ढ़क कर, ऊपर से पानी का छिड़काव समय–समय पर करते रहते है, जिससे कि उचित नमी बनी रहे। लगभग 15 दिनों में भूरे रंग के ढेर पर हरे रंग का फफूँद दिखाई पड़ने लगती है। इस प्रकार लगभग 25 दिनों में ढेर पूर्णतया हरा दिखाई पड़ने लगता है। अब इस ढेर का उपयोग हम मृदा उपचारण के लिए कर सकते हैं। इस प्रकार हम अपने घर पर सस्ते, सरल व उच्च गुणवत्तायुक्त जैव नियंत्रक *ट्राइकोडर्मा* का उत्पादन कर सकते है। नया ढेर पुनः तैयार करने के लिये पहले से घर में कण्डे पर तैयार *ट्राईकोडर्मा* का कुछ भाग हम बचा कर सुरक्षित रखते हैं और उसका प्रयोग हम नए ढेर के मदर कल्चर के रूप में करते हैं, जिससे कि बार–बार हमें मदर कल्चर बाहर से नहीं लेना पड़ता है।

जैव नियंत्रक ट्राइकोडर्मा युक्त गोबर से लाभः–

- रासायनिक खादों एवं रोगनाशकों की अपेक्षा कम कीमत।
- मानव स्वास्थ्य एवं पर्यावरण पर कोई दुष्प्रभाव नहीं।
- मृदा में कोई प्रदूषण नहीं।
- मृदा में रहने वाले अन्य लाभदायक जीवों पर कोई दुष्प्रभाव नहीं।
- पादप वृद्धि में सहायक है।
- मृदा की फॉस्फोरस को घुलनशील बनाता है।
- खद्यान्न के उत्पादन में मात्रात्मक व गुणात्मक वृद्धि होती है।
- यह पोधौ में रोग प्रतिरोधी क्षमता उत्पन्न करता है। मृदाजनित रोगों जैसे *फ्यूजेरियम* म्लानि, आर्द्रपतन, जड़ सड़न, तना विगलन, ग्रीव विगलन, *स्केलेरोशियम* गलन आदि रोगकारकों को नष्ट कर देता है।

उत्पादन हेतु ध्यान देने योग्य बातें

स्थान का चुनाव : सामान्यतः हम इस प्रयोग को छायादार पेड़ों के नीचे या छप्परों के नीचे कर सकते हैं, जिससे कि प्रकाश की किरणें ढेर पर सीधे नहीं पड़ती और उचित नमी अधिक समय तक संरक्षित रहती है।

वायु : सूक्ष्मजीवों को जीवित रहने के लिये वायु की आवश्यकता पड़ती है। इसके अतिरिक्त वायु के बहाव की निकासी होनी चाहिये।

जल : उचित नमी के लिये जल की आवश्यकता होती है, जिससे कि फफूँद कार्बनिक ढेर का अच्छी तरह प्रयोग कर वृद्धि कर सकें। परन्तु अधिक पानी से ढेर में वायु की कमी हो जाती है, जिससे कि अन्य हानिकारक बैक्टीरिया उत्पन्न हो जाते हैं।

तापमान : फफूँद की वृद्धि के लिये उचित तापमान की आवश्यकता होती है। सामान्यतः *ट्राईकोडर्मा* के लिये 25^0 से 30^0 सेल्सियस तापमान आवश्यक होता है। ढेर में स्वतः ऊष्मा का निर्माण भी होता है, जिससे इसका तापमान बढ़ जाता है। इसलिये 7 से 10 दिनों पर ढेर को एक बार मिश्रित कर देना चाहिये।

प्रयोग विधि :–

उपर्युक्त घरेलू विधि से कण्डे पर तैयार *ट्राइकोडर्मा* उत्पादन को बुवाई के पूर्व 25 कि.ग्रा./एकड़ की दर से मिट्टी में मिला देना चाहिये। बुवाई के पश्चात् भी पहली निराई–गुड़ाई के समय भूमि उपचार किया जा सकता है, ताकि यह पौधों की जड़ तक पहुँच जाए। बहुवर्षीय पेड़ों में प्रयोग के लिये जड़ के चारों ओर गड्ढा खोदकर मिट्टी में सीधा मिला देना चाहिए। हम अपने खेतों में बीज रोपाई के समय या पहले सीधे मृदा में, क्यारियों की नालियों में, डिब्बे में, गमले में, कार्बनिक खाद की तरह प्रयोग कर सकते हैं। उपरोक्त सरल व सस्ती घरेलू विधि द्वारा उच्च गुणवत्तायुक्त *ट्राईकोडर्मा* का कण्डें पर उत्पादन ग्रामीण कृषक अपने घरों पर स्वयं करके एवं खेतों में प्रयोग कर, वर्तमान भारतीय रासायनिक कृषि पद्धति में आमूल–चूल परिवर्तन कर नयी जैविक कृषि क्रान्ति ला सकते हैं, जोकि हमारे राष्ट्र हित में, पर्यावरण हित एवं जैव समुदाय के हित में होगा। खुशहाल कृषक ही समृद्ध देश की पहचान है।

बाजार में उपलब्ध गुणवत्तायुक्त ट्राइकोडर्मा उत्पाद या उत्तर प्रदेश सरकार द्वारा उपलब्ध *ट्राईकोडर्मा* अनुकल्प का प्रयोग बीज शोधन हेतु किसान भाई करें तो लाभ होगा। बीज शोधन की मात्रा 5–10 ग्राम *ट्राईकोडर्मा* अनुकल्प द्वारा बीज शोधन करने से फसलों में मृदाजनित रोगों का नियंत्रण होता है, साथ ही उपज में 10–12 प्रतिशत की वृद्धि की जा सकती है।

लाभ :–

कम्पोस्ट एवं वर्मी कम्पोस्ट में ट्राईकोडर्मा मिलाकर मृदा का स्वास्थ्य सुधारना एक सरल एवं लाभकारी विधि है। यह एक अरासायनिक विधि है जिसमें कोई विषाक्त पदार्थ सम्मिलित नहीं है। इसमें उपभोक्ताओं, परपोषी पौधों अथवा अन्य जीवों के लिये विषाक्त पदार्थ नहीं होता है और प्रयोगकर्ता के लिये भी हानिकारक नहीं है। अन्य विधियों की अपेक्षा यह विधि कम खर्चीली है। कम प्रशिक्षित किसानों को पढ़ाने, समझने तथा प्रयोग के लिये यह विधि आसान है। किसान भाई स्वयं इस विधि का प्रयोग कर अपनी फसलों की उत्पादकता बढ़ा सकते है साथ ही पौधों में मृदाजनित रोगों से भी फसलों को बचा सकते है। अतः यह सभी प्रकार के किसानों (छोटे, बड़े एवं अति छोटे) के लिये उपयोगी है। रोग नियन्त्रक सामान्यतः एक से अधिक मौसम तक प्रभावी होता है इसलिये यह एक दीर्घकालीन प्रभाव है। इस विधि में एकीकृत नियन्त्रण का गुण होता है।

वर्मीकम्पोस्ट निर्माण की विधि एंव कृषि में महत्व

[1]पवन कुमार शर्मा*, [1]प्रदीप कुमार, [1]अजय कुमार
[1]बी. एस. सी. (कृषि), कृषि विज्ञान एंव संबद्ध उघोग संकाय,
रामा विश्वविधालय, कानपुर
***ई मेल:-** pkk50953@gmail.com

परिचयः–

वर्मी कम्पोस्ट–

केचुएं कि मदद से कचरे को खाद में परिवर्तित करने हेतु केचुओं को नियन्त्रित वातावरण में पाला जाता है। इस प्रक्रिया को वर्मी कल्चर कहते है। केचुओं द्वारा कचरा खाकर जो कास्ट (मल) निकलता है, उसे एकत्रित रूप से वर्मी कम्पोस्ट कहतें है। वर्मी कम्पोस्ट कों **"काला सोना"** भी कहा जाता हैं।

केचुओं का महत्व :–

केचुओं कृषि में अपना महत्वपूर्ण योगदान भूमि सुधार के स्प में देता है। इनकी कार्य शिलता मृदा में स्वतः चलती रहती है, जिस भूमि में केचुएं नही पाये जाते है उनसे यह स्पष्ट होता है कि मिट्टी अपनी उर्वरा शक्ति खो रही है, तथा उसका उसर भूमि में परिवर्तन हो रहा है।

केचुआ मिट्टी में पाये जाने वाले जीवो में सबसे प्रमुख है। ये अपने आहार के रूप में मिट्टी तथा कच्चे जिवांश को निगलकर अपनी पाचन नलिका से गुजराते है। जिससे वह महीना कम्पोस्ट में परिवर्तित हो जाते है।और अपनी शरीर से बाहर छोटी–छोटी कास्टिम्स के रूप में निकालते है, इस कम्पोस्ट को वर्मी कम्पोस्ट कहतें है। अब तक केचुओ कि 4500 प्रजातियॉ विश्व में विभिन्न भागो में बताई जाती चुकी है। केचुएं प्रायः दो प्रकार के होतें है, जलीय और स्थलीय।

कम्पोस्ट बनाने कि विधि :–

वर्मी कम्पोस्ट कई विधि से बनाई जाती है, जैसे कि चरणबद्ध विधि–

यह चरणबद्ध विधि कई चरणे में की जाती है।

चरण 1:–कार्बनिक अवशिष्ट कचरे से पत्थर, कॉच, प्लास्टिक, सिरेमिक तथा धातुओ को अलग करके कार्बनिक कचरे के बडे ढ़ेलो को तोड़कर ढ़ेर बनाया जाता हे।

चरण 2 :–मोटे कार्बनिक अवशिष्टो जैसे पत्तियो का कुड़ा पौधो के तने गन्ने कि भूसि खोयी को दो चार इंच आकार के छोटे–छोटे टुकड़ो में काटा जाता है। इससे खाद बनने में कम समय लगता हे।

चरण 3:–कचरे में से दुर्गन्ध हटाने व आवॉछित जीवो को खत्म करने के लिए कचरे को उक फुट मोटी सतह के रूप में फुलाकर धुप में सुखाया जाता है।

चरण 4:–अवशिष्ट को गाय के गोबर में मिलाकर एक माह तक सड़ाने हेतु गड्डो में डाल दिया जाता है, उचित नमी बनाने हेतु रोव पानी का छिड़काव किया जाता है।

चरण 5:–केचुआ खाद बनाने के लिए सबसे पहले फर्स पर बालु कि 1 इच मोटी पर्त बिछाकर उसके उपर चरण चार से प्राप्त पदार्थो को 18 इंच मोटी पर्त इस प्रकार बिछातें है कि इसकी चौड़ाई 40–45 इन्च बन जाती है । बेड कि लम्बाई को छप्पर में उपलब्ध जगह के आधार पर रखतें है। इस प्रकार 10

फिट लम्बाई कि बेड में लगभग 500 किग्रा कार्बनिक अवशिष्ट समाहित हो जाता है। बेड़ को ऐसा रखे जिसमें केचुओं को घुमाने के लिए पर्याप्त स्थान तथा बेड में हवा का प्रबंधन संभव हो सके ।बेड में नमी बनाये रखने के लिए पानी का छिड़काव करतें रहते है।

चरण 6:—जब बेड के सभी भागो में तापमान सामान्यतः हो जाये तब इसमे लगभग 5000 केचुए 5000 ग्राम अवशिष्ट कि दर से केचुओं तथा कोकुन का मिश्रण बेड कि एक तरफ से इस प्रकार डालतें है कि यह लम्बाई में से एक तरफ से पुरे बेड तक पहुॅच जाये।

चरण 7:—सम्पूर्ण बेड को बारीक कटे हुए अवशिष्ट कि 3—4 इंच मोटी पर्त से ढ़कते है। अनुकुल परिस्थितियो में केचुऐ पूरे बेड पर अपने पावॅ फैला जातें है अधिकतर केचुऐ बेड में 2—3 इंच गहराई पर रहकर कार्बनिक पदार्थो का भक्षण कर उत्सर्जन करते रहतें है।

चरण 8:—अनुकुल आर्द्रता, तापक्रम तथा हवामय परिस्थितियेा में 25—30 दिनो के उपरांत बेड कि उपरी सतह पर 3—4 इंच मोटी केचुआ खाद एकत्र हो जाती है। इसे अलग करने कि लिए बेड कि बाहरी आवरण सतह को एक तरफ से हटाते है।ऐसा करने पर जब केचुआं बेड पे गहराई में चले जाते है तत्पश्चात बेड को पुनः पुर्व कि भांति महिन कचरे से ढ़क कर पर्याप्त आर्दता बनाये रखने हेतु पानी का छिडकाव कर देते है।

चरण 9:—लगभग 5—7 दिनो में केचुआं खाद कि 4—6 इंच मोटी एक और परत तैयार हो जाती है। इसे भी पिछले चरण आठ कि भॉति अलग कर लेतें है तथा बेड में फिर पर्याप्त आर्दता बनाये रखने हेतु पानी का छिड़काव किया जाता है।

चरण 10:—हर 6—8 दिनो के अन्तराल में अनुकुल परिस्थियो में पुनः केचुआ खाद कि 4—6 इंच मोटी पर्त बनती है। जिसे पूर्व में चरण 9 कि भॉति अलग कर लिया जाता है। इस प्रकार 40—45 दिनो में लगभग 80—85 प्रतिशत केचुआ खाद एकत्र कर ली जाती है।

चरण 11:—अन्त में कुछ केचुआ खाद के केचुओं तथा केचुओं के अण्डो सहित एक छोटे से ढेर के रूप में बच जाती है, इसे दुसरे चक्र में केचुऐ के रूप में प्रयुक्त कर लेतें है इस प्रकार लगातार केचुआ खाद उत्पादन के लिए इस प्रकिंया को दोहराते रहतें है।

चरण 12:— एकत्र कि गई केचुआ खाद से केचुऐ के अंडो अवयस्क केचुओ तथा केचुऐ द्वारा नही खाए गये पदार्थो को 3—4 सेमी आकार कि छल्ली से छान कर अलग कर लेतें है।

चरण 13:—अतिरिक्त नमी हटाने कि लिए छनी हुई केचुआ खाद को पक्के फर्श पर फैला देतें है, तथा जब नमी लगभग 30—40 प्रतिशत तक रह जाती है तो इसे एकत्र कर लेते है।

चरण 14:— केचुओं खाद को प्लास्टिक थैले में सिल करके पैक किया जाता है ताकि इसमें नमी कम न हो ।

केचुओं को भोजन देना :—

30 दिन के बाद 31 वे दिन वर्मी बैंड में थोड़ा—थोड़ा जैविक कचरा समान रूप से फैला सकते है कचरे के तह कि मोटाई 5 से0मी0 से अधिक मोटी नही होनी चाहिए, अथवा कचड़े के सड़ने से जो गर्मी उत्पन्न होगी उससे केचुओं को नुकसान हो सकता है। एक सप्ताह में दो बार कचरा वर्मीबैंड पर डाला जा सकता है। इस समय भी नमी 50—50 प्रतिशत बनाये रखना चाहिए। केचुओं के बाक्स ढककर रख दे, केचुओं कि सुरक्षा के लिए अनिवार्य है कि इस तहर से ढके कि बाक्स में हवा का वहन ठीक प्रकार से होता रहे।

उपयोग विधि :–

वर्मी कम्पोस्ट जैविक खाद का उपयोग विभिन्न फसलो में अलग–अलग मात्रा में किया जाता है। खेती की तैयारी के समय 2.5 से 3.0 टन प्रति हेक्टेयर उपयोग करना चाहिए।

खाद्यान फसलो में 5.0 से 6.0 टन प्रति हेक्टेयर मात्रा का उपयोग करें। गार्डन व मामलो मे 100 ग्राम प्रति गमला खाद का उपयोग करे। सब्जियो में 11–13 टन/ हेक्टेयर खाद का उपयोग करें।

वर्मी कम्पोस्ट में विभिन्न तत्वो कि मात्रा :–

वर्मी कम्पोस्ट में साधारण मृदा कि तुलना में 5 गुना अधिक नाईटोजन 7 गुना अधिक फास्फेट 7 गुना अधिक पोटास 2 गुना अधिक मैग्नीशियम व कैल्शियम होता है।

N- 1.0-2.25%

P_2O_5 – 1.0-1.50

वर्मीकम्पोस्ट के लाभ :–

वर्मी कम्पोस्ट एक अच्छी किस्म कि खाद है तथा साधारण कम्पोस्ट या गोबर कि खाद से ज्यादा लाभदायक साबित हुई है।

1. वर्मी कम्पोस्ट को मृदा से मिलने से भूमि मृदा भुरभुरी एवं उपजाऊ बनती है।
2. वर्मी कम्पोस्ट में आवश्यक पोषक तत्व प्रचुर व संतुलित मात्रा में होते है। जिससे पौधे संतुलित मात्रा में विभिन्न आवश्यक तत्व प्राप्त कर सकते है।
3. वर्मी कम्पोस्ट टिकाउ खेती के लिए बहुत हि महत्वपूर्ण है।
4. वमी कम्पोस्ट जैविक खेती के लिए एक नया कदम है।

संरक्षित कृषि मे प्लास्टिक का उपयोग एंव महत्व

याशिका मल्होत्रा
बी. एसी. (कृषि), कृषि विज्ञान एंव संबद्ध उघोग संकाय
रामा विश्वविद्यालय, कानपुर, उत्तर प्रदेश
*ई मेल:- yashikamalhotra3106@gmail.com

परिचयः–

भारत जैसे विकासशील देश मे कृषि तकनीकों में लगातार विकास हो रहा है तथा नयी नयी तकनीकों से कृषि के क्षेत्र में दिन प्रतिदिन वृद्धि हो रही है। प्लास्टिक का उपयोग कृषि क्षेत्र में विकास के लिए बढ़ाया गया एक कदम है जिसके प्रयोग से किसान को कृषि क्षेत्र में अत्यधिक सहायता मिल रही है तथा यह किसानो के विकास के लिए अत्यधिक लाभकारी है।

कृषि क्षेत्र में प्लास्टिक का परिचय :–

सत्र १९४० के दशक में एक बागवानी के वैज्ञानिक प्रशिक्षक **इ. एम. एम. एम्मर्ट** द्वारा कृषि में प्लास्टिक सामग्रियों का परिचय दिया जिन्हे **"प्लास्टिक ग्रीनहाउस का जनक"** माना जाता है। कृषि में पहली बार प्लास्टिक का प्रयोग द्वारा ग्रीनहाउस बनाने में किया गया था। कृषि में प्लास्टिक कल्चर को बढ़ावा देना के लिए १९८१ में केमिकल और पेट्रो रासायनिक विभाग द्वारा एक समिति गठित की गयी बाद में इस समिति को कृषि मंत्रालय से जोड़ा गया । भारत में १९८१ के बाद प्लास्टिक का प्रयोग प्रारम्भ हो गया।

प्लास्टिक पलवार का चुनावः–

प्लास्टिक पलवार फिल्म का रंग काला,पारदर्शी ,दूधिया, प्रतिबिंबित ,नीला एवं लाल हो सकता है। किसान अपनी फसल एवं सुविधा के अनुसार पलवार का चुनाव कर सकता है।

प्लास्टिक के उपयोग से कृषि में लाभः–

प्लास्टिक पलवार –

प्लास्टिक पलवार का प्रयोग आज के युग में एक अच्छा विकल्प है जहाँ कार्बनिक पलवार की बड़ी मात्रा में आसानी से उपलब्धता नहीं होती। प्लास्टिक पलवार से अनेक लाभ है , जैसे : मृदा में नमी संरक्षण एवं तापमान नियंत्रण में सहायक होता है ,खरपतवार की वृद्धि के अवरोधन में सहायक है जो कि फसल वृद्धि की एक गंभीर समस्या है ,पलवार की सहायता से उत्पादन में सुधार हुआ ,इसकी सहायता से पौधों की वृद्धि के लिए अनुकूलित वातावरण भी बना रहता है। अतः प्लास्टिक पलवार का प्रयोग अत्यधिक लाभकारी है।

प्लास्टिक पलवार से मिट्टी का उचित अवस्था में रहना– प्लास्टिक पलवार के उपयोग से मिट्टी में उचित नमी एवं ढीलापन बना रहता है जिससे मिट्टी की सतह में कठोरता नहीं आती। जिसके फलस्वरूप मृदा की जड़ो में ऑक्सीजन तथा माइक्रोबियल गतिविधियां बनी रहती है। जो की पौधे के विकास के लिए आवश्यक है।

पानी की बचत –पानी का व्यर्थ होना कृषिको के लिए एक गंभीर समस्या है प्लास्टिकल्चर से पानी की बचत होती है जो की आज के युग मे अत्याधिक आवश्यक है । इस कल्चर में प्रयोग हो रही सिचांई विधियां जैसे हाई डेंसिटी पाली ईथीलीन पॉलीमर एवं लौ डेंसिटी पाली ईथीलीन पॉलीमर के पाइप का

प्रयोग एवं बून्द बून्द सिचांई द्वारा 40–50 प्रतिशत, स्प्रिंकलर द्वारा 30–40 प्रतिशत, ग्रीन हाउस द्वारा 60–85 प्रतिशत व प्लास्टिक पलवार द्वारा 40–60 प्रतिशत पानी की बचत होती है।

फसलों की वृद्धि में सहायक –

प्लास्टिक मल्च के उपयोग से अनावश्यक पानी मृदा में नहीं जाता जिससे पलवार के नीचे की मृदा में बारिश जैसी स्तिथि में भी अधिक परिवर्तन नहीं आता एवं फसल की वृद्धि उचित रूप से होती है तथा इस तरह की कठिन परीस्थियो में भी फसल गिरती नहीं है। जो की आज की एक महत्वपूर्ण समस्याओ में से एक है। प्लास्टिक पलवार की सहायता से प्लास्टिक की फिल्म के नीचे CO_2 गैस एकत्रित हो जाती है जो की पौधे में होने वाली प्रकाश संस्लेषण की क्रिया में सहायक है जो की पौधे की वृद्धि में आवश्यक है।

खरपतवार की समस्याओ का निवारण –

खरपतवार की समस्या आज के समय में किसान की सबसे गंभीर समस्याओ में से एक है जो की फसल को नष्ट करने में बहुत अधिक भूमिका निभाती है। प्लास्टिक कल्चर में ब्लैक एवं आई आरटी प्लास्टिक पलवार खरपतवार नियंत्रण में अत्यधिक सहायक है जिसके प्रयोग से खरपतवार में नियंत्रण देखा गया है।

विपरीत परिस्थियों में भी उपयोगी –

आज के युग में खेती करने की अनेक तकनीकों का उपयोग हो रहा है, प्लास्टिक कल्चर द्वारा की गयी खेती भी उनमे से एक ही है। प्लास्टिकल्चर द्वारा कुछ स्थान जैसे पर्वतीय क्षेत्र जैसे शिलॉन्ग ,श्री नगर, लेह, लद्दाख , एवं सुखी जमीने जैसे की रेगिस्तान जैसी जगह पर भी अब खेती करना संभव हो गया है। अब स्थानों पर भी साग सब्जी, फल– फूलो का व्यवसाये संभव है।

किसानो की आय में वृद्धि –

किसान की आय में वृद्धि करना आज के समय की सबसे प्रथम भूमिका है सरकार द्वारा इस कार्य हेतु अनेक प्रोग्राम स्कीम भी जारी की गयी है। प्लास्टिक कल्चर किसानो की आय को बढ़ाने के लिए की जाने वाली माँगो में से सर्वाधिक प्रचलित है।इस तकनिकी का प्रयोग करके किसान फसल पैदावार में भी वृद्धि कर रहा है। कृषि के क्षेत्र में कृषि राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था द्वारा जी. डी. पी. १४ प्रतिशत योगदान है, जबकि यहाँ की जनसँख्या का किसी न किसी प्रकार से आजीविका का साधन कृषि ही है। अतः कृषि क्षेत्र मई तकनिकी विकास एवं किसान की सुविधा अनुसार योजनाओ का बनाना देश की जनसंख्या एवं इसके विकास के लिए अत्यधिक आवश्यक है।

चित्रः– **प्लास्टिक का उपयोग संरक्षित खेती में**

मशरूम उत्पादनः– छोटे किसानों की आय का उत्तम स्त्रोत

[1]अजय चौरसिया*, [2]कुलदीप एंव [1]अंकित कुमार

[1]नरेन्द्र देव कृषि एवं प्रौघेगिकी विश्वविधालय, अयोध्या, उत्तर प्रदेश

[2]डॉ. राजेन्द्र प्रसाद केन्द्रीय कृषि विश्वविधालय, पूसा, बिहार

***ई मेलः-** ajaylko95@gmail.com

परिचयः–

भारत मे मशरूम को सामान्यतः 'धरती के फूल', 'खुम्बी', 'छत्रा', 'कुकुरमुत्ता', और 'भूमिकवक' आदि नामों से जाना जाता है । देश मे मुख्यतः ढिंगरी और श्वेत बटन मशरूम का उत्पादन किया जाता है। नाबार्ड द्वारा एक जारी 'नाबार्ड अखिल भारतीय ग्रामीण वित्तीय समावेशन सर्वेक्षण' 2016–17 के अनुसार भारत मे कृषक परिवारों की मासिक आय 8931 रुपए है और ऐसे परिवारों मे औसत सदस्यों की संख्या पाँच से कम नहीं है। देश के 85 प्रतिशत किसान ऐसे है जिनके पास 2 हेक्टेयर से भी कम भूमि है। इन्हीं कारणों के चलते छोटे किसानों की आय बढ़ाना एक मुश्किल कार्य है। इस स्थिति मे 'मशरूम उत्पादन' को प्रोत्साहित कर इस समस्या से निपटने मे मदद मिल सकती है। मशरूम उत्पादन मे कृषि और पशुपालन के अवशिष्ट जैसे भूसा, पुवाल, गोबर का प्रयोग कर कम क्षेत्रफल मे आधिक आय प्राप्त की जा सकती है।

श्वेत बटन मशरूम की खेती :–

बटन मशरूम व्यावसायिक दृष्टि से सर्वाधिक उगाया जाने वाला मशरूम है। यह सफेद रंग का छतरीनुमा मशरूम है जिसे खाद पर उगाया जाता है। श्वेत बटन मशरूम की खाद तैयार करने के लिये गेहूं या धान के भूसे को प्रयोग मे लाया जा सकता है।

जलवायु :–

बटन मशरूम का उत्पादन समशीतोष्ण जलवायु मे नवम्बर से फ़रवरी माह के मध्य किया जाता है। सामान्यतः इसे बीजाई से लेकर के कवक जाल फैलने तक 20° से 25° तथा तुड़ाई के समय 15° से 20° C तक तापमान की आवश्यकता होती है । मशरूम उत्पादन मे 75 से 85 प्रतिशत नमी की आवश्यकता होती है।

बुवाई का समय :–

मैदानी क्षेत्रों मे बटन मशरूम का उत्पादन नवम्बर से फ़रवरी महीने के मध्य करते है। खाद की तैयारी नवम्बर माह के प्रथम सप्ताह से प्रारम्भ कर देना चाहिये। जिससे दिसम्बर माह के प्रारम्भ मे मशरूम की बीजाई की जा सके। छोटे किसानों के लिये खाद तैयार करने की लंबी विधि उत्तम होती है क्योंकि यह विधि सरल एवं सस्ती होती है।

क्र. सं.	सामान	मात्रा
1.	गेहूँ का भूसा	300 कि.ग्रा.
2.	चोकर	10–15 कि.ग्रा.
3.	यूरिया	3 कि.ग्रा.
4.	म्यूरेट आफ पोटाश	3 कि.ग्रा.
5.	सिंगल सुपर फास्फेट	3 कि.ग्रा.
6.	कैल्सियम अमोनियम नाइट्रेट	9 कि.ग्रा.
7.	जिप्सम	28–30 कि.ग्रा.
8.	शीरा	5 कि.ग्रा.

खाद तैयार करने की विधि :–

मशरूम उत्पादन के लिये खाद को तीन चरणों मे 28 दिनों मे तैयार करते है।

(1.) भूसा गीला करना एवं उर्वरक मिश्रण तैयार करना

(2.) ढेर तैयार करना

(3.) पलटाई का क्रम

(1.) भूसा गीला करना एवं उर्वरक मिश्रण तैयार करना

खाद तैयार करने के लिये एक समतल सीमेंट के बने फर्श का प्रयोग करना चाहिये। खाद की तैयारी प्रारम्भ करने से 24 घंटे पूर्व पक्के फर्श को निर्जीवीकृत करने के लिये 2 प्रतिशत फार्मेलीन से धुलाई करनी चाहिये। भूसे को फर्श पर 2 दिन तक रुक रुक कर पानी का छिड़काव करके गीला किया जाता है। गीला करते समय भूसे को पैरों से दबाते रहने से पानी का अवशोषण अधिक होता है। भूसे मे लगभग नमी 75 प्रतिशत तक होनी चाहिये। भूसे का ढेर बनाने के 15 घंटे पहले जिप्सम को छोड़कर अन्य सभी सामग्री उर्वरक, चोकर व शीरा को मिलाकर गीला करके रख देना चाहिए साथ ही उर्वरक को चोकर मे अच्छी तरह से अवशोषित करने के लिये एक गीली बोरी से मिश्रण को ढक दें।

(2.) ढेर तैयार करना

अब गीले भूसे में उर्वरक मिश्रण मिलाकर एक ढेर बनाते है। ढेर की लंबाई सामग्री की मात्रा के आधार पर तय करते है किन्तु चौड़ाई एवं ऊँचाई दोनों 5 फुट रखनी चाहिए। ढेर तैयार होने के पश्चात इसे पाँच दिनों तक इसी अवस्था मे पड़ा रहने देते है। नमी बनाये रखने के लिये पानी का छिड़काव जरूरी होता है। पांचवे दिन तक ढेर के अंदर का तापमान 70–80° C तक हो जाता है। जिसे तापमापी से मापा जा सकता है। इसके उपरांत छठवें दिन से अगले अठठाईसवें दिन के मध्य खाद की आठ पलटाई करें।

(3.) पलटाई का क्रम

बटन मशरूम की खाद तैयार करने मे 28 दिनों का समय लगता है। इस दौरान खाद के प्रत्येक भाग को अच्छे से सड़ाने के लिए छठवें दिन पहली पलटाई एवं द्वितीय से अठठाईसवें दिन के मध्य प्रत्येक तीसरे दिन खाद की अठठाईसवें दिन के मध्य प्रत्येक तीसरे दिन खाद की अठठाईसवें दिन के मध्य प्रत्येक तीसरे दिन खाद की पलटाई की जाती है। ढेर महत्वपूर्ण पहली पलटाई ढेर बनाने के बाद छठवें दिन की जाती है। इसमे खाद के ढेर मे पर्याप्त वायु व नमी बनाये रखने के लिए इसके प्रत्येक हिस्से मे फावड़ा–कुदाल की मदद से पलटाई करते है। अच्छी पलटाई के लिए पाँच दिनों से रखे इस ढेर को तीन परतों मे पृथक कर लेना चाहिये।

पलटाई	दिन
प्रथम	6वें
द्वितीय	10वें
तृतीय	13वें
चौथी	16वें
पाँचवी	19वें
छठवीं	22वें
सातवीं	25वें
आठवीं	28वें

प्रथम परत	बाहरी (1 फुट मोटी परत) कम सड़ी हुई सूखी परत
द्वितीय परत	बाहरी सूखी परत के बाद एवं भूरी परत के मध्य
तीसरी परत	भूरी खाद वाली अंतिम परत

इसके बाद नया ढेर बनाने के लिये सबसे नीचे द्वितीय परत फिर प्रथम परत एवं सबसे ऊपर तीसरी रखें। आगे की सभी पलटाई (दूसरी, तीसरी, चौथी, पाँचवी, छठवीं, सातवीं और आठवीं) प्रथम पलटाई की भांति ही करते है। अंतिम पलटाई (28वें दिन) खाद मे अमोनिया तथा नमी का परीक्षण किया जाता है। खाद से पशु मूत्र जैसी गंध का आना अमोनिया के होने का संकेत है। इसको मिटाने के लिये 3 दिन के अंतर मे एक से दो पलटाई और करनी चाहिये। खाद मे नमी की मात्रा जानने के लिये खाद हाथ मे लेकर मुट्ठी से दबाने पर यदि हथेली गीली हो जाये किन्तु पानी निचुड़ कर न बहे तो इस स्थिति मे लगभग 70 प्रतिशत तक नमी मौजुद है। एक अच्छे गुण वाली खाद का रंग भूरा, नमी 70 प्रतिशत, अमोनिया गंध मुक्त और पी॰एच॰ मान 7.5 के आसपास होता है।

बीजाई :–

बटन मशरूम का उत्पादन पालीथीन के थैलों मे भरकर एवं लकड़ी या लोहे की बनी ट्रे पर किया जा सकता है। व्यावसायिक स्तर पर उत्पादन करने के लिये कक्ष मे लकड़ी या लोहे के बहुस्तरीय सेल्फ या मचानें का स्थायी ढांचा तैयार करना चाहिये। प्रत्येक सेल्फ की लंबाई कक्ष की लंबाई के अनुसार, चौड़ाई लगभग 70–80 से.मी. ऊँचाई 18–20 से.मी.तक रखनी चाहिये। बीजाई से दो दिन पूर्व पूरे कक्ष की दीवारों, खिडकियों, मचानों पर 2 प्रतिशत फार्मेलिन का छिड़काव करके कक्ष को बंद कर दें। इसके बाद बीजाई वाले दिन के 12 घंटे पहले कक्ष को खोल दें ताकि फॉर्मेलिन की गंध हट जाये। खाद को प्रत्येक सेल्फ की 8–10 से॰मी॰ ऊँचाई तक भरे, इसके बाद ऊपर से स्पान को फैला कर बीजाई कर दें। पुनः 7–8 से.मी. खाद की परत से भराई कर दें। 100 कि॰ग्रा॰ खाद की बीजाई के लिए 500–800 ग्राम स्पान का प्रयोग करना चाहिये। बीजाई के बाद कक्ष मे 20–25° सेल्सियस तापमान व 75–80 प्रतिशत तापमान नमी को बनाये रखना चाहिए। नमी बनाये रखने के लिए आवश्यकतानुसार पानी का छिड़काव करे। बीजाई के दो सप्ताह बाद खाद की सतह पर सफेद कवक जाल फैल जायेगा। सतह पर कवक जाल के फैलने के पश्चात उसे आवरण मृदा द्वारा ढक दिया जाता है।

आवरण मृदा तैयार करने की विधि :–

कवक को नमी, पोषक तत्व प्रदान करने के लिये आवरण मृदा का प्रयोग करते है। आवरण व केंसिग मृदा तैयार करने के लिये दोमट मिट्टी, रेत, गोबर की खाद (दो वर्ष पुरानी), पुरानी खुम्ब की खाद, चूना आदि का उचित अनुपात मे प्रयोग करते है।

(क.) दोमट मिट्टी + रेत (4 : 1)

(ख.) गोबर की खाद + दोमट मिट्टी (1 : 1)

(ग.) पुरानी खुम्ब की खाद + गोबर की खाद + दोमट मिट्टी (2 : 1 : 1)

आवरण मृदा का प्रयोग करने से पूर्व इसे 2 प्रतिशत फार्मेलिन (1.5–2 लीटर) से गीला करके निर्जीवीकृत करें। गीला करने के पश्चात केसिंग मृदा के ढेर को एक पालीथीन से ढक कर उसके किनारों को अच्छे से

दबा दे। केंसिंग प्रक्रिया प्रारम्भ करने के पूर्व 1 दिन पहले ही पालीथीन हटानी चाहिये। आवरण मृदा को खाद की सतह पर 4–5 से.मी. की मोटी परत मे कवक जाल पर फैला दें।

लगभग 7–8 दिनों के बाद कवक जाल आवरण परत पर दिखाई देने लगेगी। इस दौरान 80 प्रतिशत तक नमी बनाये रखना चाहिये तथा कक्ष का तापमान 15^0–20^0 C तक होना चाहिये। इस तापमान पर मशरूम का उत्पादन प्रारम्भ हो जाता है। अच्छे उत्पादन के लिये कक्ष मे वायु संचार की उचित व्यवस्था होनी चाहिये। इस समय अधिक नमी लगभग 85–90 प्रतिशत बनाये रखने के लिये दिन मे एक बार पानी का छिड़काव करें।

तुड़ाई :–

मशरूम की कलिकाओं को विकसित होकर परिपक्व होने मे 2–3 दिनों का समय लगता है। आवरण मृदा की परत बनाने के 15–18 दिनों के बाद मशरूम उत्पादन प्रारम्भ हो जाता है। जब मशरूम की टोपी का आकार 3–4 से॰मी॰ तथा टोपी बंद हो हो उसे तने सहित ऐंठकर तोड़ लेना चाहिये। तुड़ाई के बाद तोड़े गये मशरूम से खाद पर बनी खाली जगह पर आवरण मृदा भर देना चाहिये।

उपज :–

इस प्रकार लंबी विधि से तैयार प्रति 100 कि॰ग्रा॰ खाद से 12–15 कि॰ग्रा॰ मशरूम का उत्पादन होता है। छोटे किसान अपने खेतों से प्राप्त अपशिष्ट उत्पाद जैसे गेंहूँ का भूसा, धान की पुआल का प्रयोग कर अपनी आय बढ़ा सकते है। वर्तमान समय मे बाजार मे बटन मशरूम की कीमत 100–120 रुपये प्रति किलोग्राम है।

चित्र : **बटन मशरूम की खेती**

ट्राइकोडर्मा–जैविक खेती में उपयोगी कवक

गायत्री भदौरिया* एंव रिया यादव
बी. एसी. (कृषि), कृषि विज्ञान एंव संबद्ध उघोग संकाय
रामा विश्वविद्यालय, कानपुर, उत्तर प्रदेश
***ई मेल:-** Bhadauriagayatri@gmail.com

परिचय:–

अच्छी फसल एवं भोजन के लिए हमें स्वस्थ मृदा की जरूरत है। पहले की अपेक्षा मिट्टी की गुणवत्ता घटती जा रही है जिसका असर हमारे भोजन में दिखाई पड़ता है इस कारण मृदा के महत्व के प्रति जागरूकता आवश्यक है। *ट्राइकोडर्मा* एक प्रमुख जैव नियंत्रक है। जो भूमि में पाये जाने वाले रोगजनक कारकों की वृद्धि को नष्ट कर पौधों को रोग मुक्त करता है अथवा पौधों की रक्षा करता है। मृदाजनित रोगकारकों जैसेः *पीथियम, राइजोक्टोनिया, स्कलोरेशियम, फ्यूजेरियम* आदि पौधों को नुकसान पहुंचाते हैं । इसका एकमात्र पर्यावरण सुरक्षित उपाय *ट्राइकोडर्मा* है । इसका प्रयोग प्राकृतिक रूप से सुरक्षित माना जाता है क्योंकि इसके उपयोग का प्रकृति में कोई दुष्प्रभाव देखने को नहीं मिलता है। यह रासायनिक कवकनाशी के ऊपर कृषको की निर्भरता कम करता है। इसकी दो प्रजातियाँ विशेष रूप से प्रचलित हैं–*ट्राइकोडर्मा विरिडी* एवं *ट्राइकोडर्मा हर्जियानम*। *ट्राइकोडर्मा* प्रकृति में मुख्यतः तीन प्रकार से रोगकारकों की वृद्धि को रोकता है। प्रथम सीधे आक्रमण करके उन्हें अपना भोजन बना लेता (Through Mycoparasitism) है। दूसरा, यह विशेष प्रकार के एंजाइम जैसे काइटिनेज, β–1,3, ग्लूकानेज का स्त्रावण (Through Enzyme Screation) करता हैं जो रोगजनक कारकों को छोटे भागों में तोड़ देता है। तृतीय, यह विशेष प्रकार के प्रतिजैविक (Through Antibiotics Secretion) रसायनों का संश्लेषण एवं उत्सर्जन करता है, जो रोगकारक जीवों के लिये विष का काम करते हैं। इस प्रकार रोगकारक जीवों की संख्या तथा उनसे होने वाले दुष्प्रभाव को कम करके पौधों की रक्षा करता है। यह पौधों में उपस्थित रोगरोधी जीन्स को सक्रिय कर पौधों की रोगकारकों से लड़ने की आन्तरिक क्षमता में भी विकास करता है।

प्रयोग विधिः–

- **बीजोपचार :–** *ट्राइकोडर्मा* पाउडर में कार्बोक्सी मिथाइल सेल्यूलोस होता है जिसके कारण पाउडर बीज में चिपक जाता है अतः बीच के साथ *ट्राइकोडर्मा* भी मृदा में चारों ओर फैल जाता है। जिसके फलस्वरूप कोई भी कवक पौधों के आसपास नहीं आता एवं पौधों हानिकारक कवक से सुरक्षित रखता है। बीजोपचार के लिये प्रति किलो बीज में 5–10 ग्राम *ट्राइकोडर्मा* पाउडर (फार्मूलेशन) जिसमें 2×10^6 सी.एफ.यू. प्रति ग्राम होता है। पाउडर अच्छी तरह से बीजों के साथ मिश्रित कर छाया में सुखा लेंते हैं एंव उसके उपरांत बुवाई करते हैं।
- **कंद उपचार :–** *ट्राइकोडर्मा* पाउडर, 10 ग्राम प्रति लीटर पानी में डालकर घोल बना लें फिर इस घोल में कंद को 30 मिनट तक डुबाकर रखें। इसके उपरांत छायादार स्थल में आधा घंटा रखने के बाद बुवाई करें।
- **सीड प्राइमिंग :–** बीज बोने से पहले खास तरह के घोल (*ट्राइकोडर्मा* स्पोर सस्पेंशन) की बीजों पर परत चढ़ाकर छाया में सुखाने की क्रिया को 'सीड प्राइमिंग' कहा जाता है। *ट्राइकोडर्मा* से सीड प्राइमिंग करने हेतु सर्वप्रथम गाय के गोबर का गारा (स्लरी) बनाएँ। प्रति लीटर गारे में 10 ग्राम *ट्राइकोडर्मा*

उत्पाद मिलाएँ और इसमें लगभग एक किलोग्राम बीज डुबोकर रखें। इसे बाहर निकालकर छाया में थोड़ी देर सूखने दें फिर बुवाई करें। यह प्रक्रिया खासकर अनाज, दलहन और तिलहन फसलों की बुवाई से पहले की जानी चाहिए।

मृदा शोधनः– एक किलोग्राम *ट्राइकोडर्मा* पाउडर को 25 किलोग्राम कम्पोस्ट (गोबर की सड़ी खाद) में मिलाकर एक सप्ताह तक छायादार स्थान पर रखकर उसे गीले बोरे से ढँकें ताकि इसके बीजाणु अंकुरित हो जाएँ। इस कम्पोस्ट को एक एकड़ खेत में फैलाकर मिट्टी में मिला दें फिर बुवाई रोपाई करें।

बहु वर्षीय में :– बहु वर्षीय पौधों की जड़ों के चारों ओर गड्ढा खोदकर 100 ग्राम *ट्राइकोडर्मा* पाउडर को मिट्टी में सीधे कम्पोस्ट में मिलाकर डाला जाता हैं। *ट्राइकोडर्मा* मृदा में उपस्थित पोषक तत्वों को अधिक मात्रा पौधों तक पहुंचाने में सहायता करता है।

नर्सरी उपचार :– बुवाई से पहले 5 ग्राम *ट्राइकोडर्मा* उत्पाद प्रति लीटर पानी में घोलकर नर्सरी बेड को भिगोएँ।

कलम और अंकुर पौधों का जडों का शोधन :– एक लीटर पानी में 10 ग्राम *ट्राइकोडर्मा* घोल लें और कलम एवं अंकुर पौधों की जड़ों को 10 मिनट के लिये घोल में डुबोकर रखें, फिर रोपण कार्य करें।

पौधा उपचार :– प्रति लीटर पानी में 10 ग्राम *ट्राइकोडर्मा* पाउडर का घोल बनाकर पौधों के जड़ क्षेत्र को भिगोएँ।

पौधों पर छिड़काव :– कुछ खास तरह के रोगों जैसे झुलसा ,पर्ण चित्ती आदि की रोकथाम के लिये पौधों में रोग के लक्षण दिखाई देने पर 5–10 ग्राम *ट्राइकोडर्मा* पाउडर प्रति लीटर पानी में मिलाकर छिड़काव करें।

लाभ :–

1) यह हानिकारक व रोग कारक जीवो की बढोतरी को रोककर पौधें को रोगमुक्त रखता है इसके प्रयोग से कृषकों की रासायनिक कवकनाशी पर निरभरता कम होती है।

2) *ट्राइकोडर्मा* बायोरेमेडीएशन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। यह हानिकारक कीटनाशकों को नष्ट करते हैं; जैसे ऑगेनोक्लोरीन, कार्बोनेट्स फास्फेट्स आदि।

3) यह पौधों में रोगकारकों के विरुद्ध तंत्रगत अधिग्रहित प्रतिरोधक क्षमता (Systemic Acquired Resistance) की क्रियाविधि को सक्रिय करता है।

4) यह मृदा में कार्बनिक पदार्थों के अपघटन की दर बढ़ाता है अतः यह जैव उर्वरक की भांति भी कार्य करता है।

5) यह पौधों में एंटीऑक्सीडेंट (Antioxidant) गतिविधियों को बढ़ाता है। टमाटर के पौधों में ऐसा देखा गया कि जहाँ मिट्टी में *ट्राइकोडर्मा* डाला गया उन पौधों के फलों की पोषक तत्वों की गुणवत्ता, खनिज तत्व और एंटीऑक्सीडेंट, गतिविधि अधिक पाई गई।

6) यह फास्फेट एवं अन्य सूक्ष्म पोषक तत्वों को घुलनशील कर पौधों की वृद्धि को बढ़ाता है

ट्राइकोडर्मा की संगतता

यह जैविक कार्बनिक खाद और इसका उपयोग अन्य बायोफर्टिलाइजर जैसे–*एजोस्पिरिलम, राइजोबियम, वैसिलस सब्टिलिस* एवं *फास्फोबैक्टीरिया* के साथ किया जा सकता है। *ट्राइकोडर्मा* रासायनिक कवकनाशी

मेटालेक्सिल और थीरम द्वारा उपचारित बीज के साथ प्रयोग किया जा सकता है पर अन्य किसी भी रासायनिक कवकनाशी (फंजीसाइड्स) के साथ नहीं।

ट्राइकोडर्मा उत्पाद का रख–रखाव

ट्राइकोडर्मा एक कवक है, अतः सामान्यतः तीन–चार महीने तक इसकी स्पोर संख्या में विशेष गिरावट नहीं आती है, परंतु समय अवधि बढ़ने के साथ इसकी प्रति ग्राम संख्या (सी. एफ. यू.) कम होने लगती है। इससे इसकी गुणवत्ता पर बहुत असर पड़ता है, इसलिये पैकेट को अधिक दिन तक रखने के लिये 8 से 10 डिग्री सेल्सियस तापमान पर संग्रहित करना चाहिए।

ट्राइकोडर्मा के प्रयोग में सावधानियाँ

- *ट्राइकोडर्मा* कल्चर फार्मूलेशन को उचित एवं प्रमाणित संस्था अथवा कम्पनी से ही खरीदें।
- कल्चर फार्मूलेशन छः महीने से अधिक पुराना न हो।
- *ट्राइकोडर्मा* के साथ–साथ अन्य कवकनाशी रसायनों का प्रयोग न करें।
- बीज–पौधे उपचार का कार्य छायादार एवं शुष्क स्थान पर करें।
- *ट्राइकोडर्मा* के प्रयोग के 4–5 दिनों के पश्चात तक रासायनिक कवकनाशी का प्रयोग न करें।
- *ट्राइकोडर्मा* उपचारित बीज को सूर्य की सीधी धूप न लगने दें।
- सूखी मिट्टी में *ट्राइकोडर्मा* का प्रयोग न करें। नमी इसके विकास और बचे रहने के लिये एक अनिवार्य पहलू है।
- कार्बनिक खाद में मिलाने के बाद इसे लम्बी अवधि के लिये न रखें।

चित्रः– ***ट्राइकोडर्मा* कल्चर प्लेट**

दोगुनी किसान आय : चुनौतियां एवं उपाय

[1]भारतेंदु यादव*, [1]विशाखा यादव एंव [2]कौशिक प्रसाद

[1]शोध छात्र, कृषि प्रसार विभाग, च.शे.आ.कृषि एवं प्रौधोगिक विश्वविद्यालय, कानपुर

[2]सहायक प्राध्यापक, प्रसार शिक्षा, कृषि विज्ञान एंव संबद्ध उघोग संकाय, रामा विश्वविद्यालय, कानपुर

*ई मेल:- yadavbhartendu@gmail.com

परिचय :–

कृषि भारतीय अर्थव्यवस्था का सबसे अग्रणी क्षेत्र है। एक इष्टतम अंश (लगभग 60 प्रतिशत) आबादी अभी भी प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से कृषि पर निर्भर है। F.A.O., 2013 भारतीय अर्थव्यवस्था में कृषि की हिस्सेदारी सकल घरेलू उत्पाद में लगभग 17.9 प्रतिशत है। सत्र 2016–17 बजट के अनुसार, भारत सरकार ने किसानों की आय दोगुनी करने का लक्ष्य रखा है। किसानों की वास्तविक आय को 2015–16 के आधार वर्ष की तुलना में 2022–23 तक दोगुना करने के लिए किसानों की आय में 10.41 प्रतिशत की वार्षिक वृद्धि दर अपेक्षित है। इसका अर्थ यह है कि कृषि आय की वर्तमान तथा पूर्व में हासिल की गई वृद्धि दर को तेजी से बढ़ाना होगा अतैव कृषि क्षेत्र के अंदर और बाहर किसानों की आय को बढ़ाने के सभी संभावित स्रोतों का सदुपयोग करने के लिए सशक्त होगी। आय दोगुनी करना निश्चित रूप से निरुत्साहित करने वाला कार्य है, जिसके लिए उन्नत एवं बेहतर रणनीति अत्यंत आवश्यक है। किसी एक मानक या बिंदु पर ध्यान देकर किसान की आय दोगुनी नहीं की जा सकती है। यह अग्रिम तकनीक , बेहतर प्रबंधन, सरकारी योजनाओं एवं नीतियों के बेहतर अनुपालन, बैंक सुविधाओं तथा मंडी की उचित जानकारी आदि द्वारा संभव है। चूँकि भारत की कुल कृषि जनसंख्या का तीन चौथाई भाग सीमान्त किसान है जोकि एक हेक्टेयर या उससे कम भूमि में अपना निर्वाहन करता है और इसीलिए उसकी आय ₹15000 – ₹20000 प्रति व्यक्ति वार्षिक आय से अधिक नहीं है। यह दर्शाता है कि किसानों की सामाजिक एवं आर्थिक जीवन दशा कितनी मौलिक है। सीमान्त किसानों में से केवल 7 प्रतिशत ही अपने खेतों पर गहन खेती द्वारा उच्य मूल्य की उपज करते हैं एवं अपनी भूमि को उच्च मूल्य की उपज के लिए आवंटित करते हैं। यह सब प्राप्त कर पाना उनकी बुद्धिमता एवं कृषि की जानकारी पर निर्भर करता है।

किसानों की आय में वृद्धि नीचे उल्लिखित विभिन्न प्रबंधन प्रथाओं द्वारा संभव हो सकता है –

- फसल विविधीकरण,
- उन्नत किस्मों का उपयोग,
- एकीकृत कृषि प्रणाली,
- अधिकृत संभव स्तर पर भूमि का उपयोग,
- बेहतर प्रबन्धन अभ्यास, आदि।

एकीकृत कृषि प्रणाली के कुछ उदाहरण हैं–

- एकीकृत चावल मछली पॉल्ट्री खेती प्रणाली।
- एकीकृत चावल मछली सब्जी नमूना।
- एकीकृत सुअर एवं पॉल्ट्री मछली सब्जी कृषि प्रणाली नमूना, आदि।

इसके अलावा किसानों को कृषि क्षेत्र से इतर आय वृद्धि के स्रोतों को ढूंढ कर अपनाना होगा। जोतदारों को गैर कृषि तथा सहायक कार्यों में लगने के लिए प्रेरित करना भी एक अच्छा विकल्प है। उपर्युक्त सभी

अभ्यास उत्पादकता उत्पादन की लागत में बचत, फसल की तीव्रता को बढ़ा देते है । चूंकि कृषि उतपादन में वृद्धि के लिए दो श्रोत है य क्षेत्र एवं उत्पादकता और भूमि एक सीमित कारक है जिसे आगे नही बढ़ाया जा सकता है। इसीलिए उपरोक्त चर्चा प्रथाओं के उपयोग से आय में उन्नति प्राप्त की जा सकती है और सामाजिक एवं आर्थिक पहलुओं में सुधार किया जा सकता है।

कीटनाशकों का पर्यावरण एवं मानव स्वास्थ्य पर प्रभाव

[1]समीर कुमार सिंह* एवं [2]कँचन गंगाराम पडवल

[1]सहायक प्राध्यापक, कीट विज्ञान विभाग, कृषि महाविद्यालय,
आचार्य नरेंद्र देव कृषि एवं प्रौद्योगिकी विश्वविद्यालय, कुमारगंज, अयोध्या–224229 (उ०प्र०), भारत
[2]सहायक प्राध्यापक, कीट विज्ञान, राजीव गाँधी दक्षिणी परिसर, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय,
बरकच्छा, मिर्जापुर–231001, (उ०प्र०), भारत
***ई मेलः-** skbhu1991@gmail.com

परिचयः–

भारत जैसे देश में जहाँ की अधिकतर आबादी कृषि पर निर्भर है। फसलों के उत्पादन में विभिन्न प्रकार के समस्याएं आती हैं। इनमें कीट एवं रोग एक प्रमुख कारक हैं, जो फसलों के उत्पादन को प्रमुखतः से प्रभावित करते हैं। कीट प्रायः फसलों पर आक्रमण करके उनकी उपज घटाने के साथ–साथ उनकी गुणवत्ता को भी प्रभावित करते हैं। कीटो के नियंत्रण के लिए जिन विषों का प्रयोग किया जाता है वह कीटनाशक कहलाते हैं । भारत जहाँ की आबादी 121 करोड़ है, इसके भरण पोषण के लिए यह अतिआवश्यक है कि हम अपने प्राकृतिक संसाधनों का प्रयोग उचित एवं धारणीय ढंग से करें। कीटनाशकों का अव्यवस्थित उपयोग मानव स्वाथ्य एवं पर्यावरण पर प्रतिकूल प्रभाव डालता है। इसके बावजूद विश्व में लगभग 44 प्रतिशत कीटनाशक, 30 प्रतिशत खरपतवारनाशक, 21 प्रतिशत कवकनाशक एवं 5 प्रतिशत अन्य विषों का उपयोग किया जाता है। भारत में लगभग 76 प्रतिशत कीटनाशक, 13 प्रतिशत कवकनाशक, 10 प्रतिशत खरपतवारनाशक एवं 1 प्रतिशत अन्य रसायनों का प्रयोग किया जाता है । इस समय उपयोग किये जाने वाले अधिकतर विष संश्लेषित कार्बनिक रसायन हैं, जो उपचारित जीव कि उपापचयी क्रियाओं पर प्रभाव डालते हैं। कीटनाशक पर्यावरण के जैविक एवं अजैविक अवयवों में निर्माण, आवागमन, भण्डराण एवं उपयोग से प्रवेश करते हैं। इस समय पर्यावण प्रदूषण एक बड़ी समस्या है। कीटनाशकों के द्वारा होने वाले प्रदूषण का उल्लेख सर्वप्रथम 1967 में प्रकशित किताब "सैइलेंट स्प्रिंग" में किया गया था, जिसमे डी०डी०टी० के मानव स्वाथ्य एवं पर्यावरण पर प्रभाव के बारे में बताया गया था।

1. **कीटनाशकों का पर्यावरण पर प्रभावः**– कीटनाशक पर्यावरण के विभिन्न घटकों पर अवंछ्नीय प्रभाव डालते है जिसको कीटनाशक प्रदूषण कहते हैं, जिसको निम्न प्रकार से समझया गया है।

(i) **मृदा प्रदूषणः–** कीटनाशक मृदा में रहने वाले कीटों के नियंत्रण में, छिड़काव से, धूलमार्जन से अथवा इनके पात्रों के मृदा मे निस्तारण से प्रवेश करते हैं। मृदा इनके भण्डारण कुण्ड का काम करती है। मृदा में कीटनाशक विशेषकर एल्ड्रिन, बी०एच०सी०, डाईएल्ड्रिन, हेप्टाक्लोर, क्लोरडेन, टोक्साफेन, मिथाइल पैराथीओन, फोरेट आदि प्रायः दीमक, सफेदलट, कुतराकीट, एवं जड़बेधक के नियंत्रण में उपयोग होते हैं। एल्ड्रिन बलुई दोमट जबकि बी० एच० सी०, पैराथीओन एवं कार्बारिल के अवशेष चिकनी दोमट मृदा में अधिक समय तक रहते हैं। मृदा में अधिक कार्बन एवं सूक्ष्मजीवों की सक्रियता भी इन कीटनाशकों के जीवन को प्रभावित करती है। क्लोरेनेटेड कीटनाशक प्रायः ओर्गनोफॉस्फेट एवं कार्बमेट की अपेक्षा अधिक समय तक मृदा में विद्यमान रहते है। इसके प्रयोग से मिट्टी की सूक्ष्मजीवों, केंचुए, परभक्षी मकड़ी, शतपदी, एवं भृंग की संख्या पर बुरा प्रभाव पड़ता है। जिससे मृदा की उर्वरता भी प्रभावित होती है।

(ii) **जल प्रदूषणः–** जल भी मृदा की समान ही किसी न किसी रूप में कीटनाशकों से प्रदूषित हो चुका है। कीटों की नियंत्रण में जानबूझ कर किये जाने वाले उपयोग से हमारे जल स्रोत भी प्रदूषित हो चुके हैं। जल स्रोत प्रायः प्रदूषित जल की अपवाह से, सीवेज निस्तारण, मृत और सड़े हुए उपचारित पौधों से प्रदूषित होता है। यूनाइटेड किंगडम की वर्षा जल में भी कीटनाशक पाए गए हैं। हिमालय की ताजे जल स्रोत में भी कीटनाशक अवशेष का वर्णन किया गया हैं। बहुत सारी नदियों में भी बड़ी मात्रा में कीटनाशक पाए गए है जो की जलीय जीवों की लिए अत्यधिक हानिकारक है।

(iii) **वायु प्रदूषणः–** जो लोग प्रायः कीटनाशकों की फैक्ट्रियों की 5–7 किलोमीटर के आस–पास रहते हैं वो इसके प्रभाव से विभ्भिन प्रकार के रोगों से प्रभावित हो जाते हैं। 1984 में गलती से भोपाल में मिथाइल आइसो सईनाइट नामक गैस के रिसाव से हजारों लोग मरे गए थे। कीटनाशकों के प्रयोग के समय भी हमारे स्वाथ्य पर हानिकारक प्रभाव पड़ते हैं। दिल्ली विश्वविद्यालय द्वारा किये गए सर्वेक्षण की अनुसार डी०डी०टी० की अत्यधिक मात्रा दिल्ली हवाई अड्डे की पास के बायोस्फियर में पायी गयी। पैराथीओन, अजिनोफोस मिथाइल, मालाथिऑन एवं कार्बारिल की वाष्प संकेन्द्रण अधिक मात्रा में उद्यान की समीप छिड़काव की बाद अधिक पायी गयी। बरमूडा की वायुमंडल में 4 प्रतिशत तक ओर्गनोक्लोरीन कीटनाशक गए हैं।

2. खाद्य वस्तुओं में कीटनाशकों का परिमाणः– फसलों पर विभिन्न प्रकार की कीटों को नियंत्रित करने की लिए अनेक प्रकार के कीटनाशकों का प्रयोग देश में लगभग चार दशक से भी अधिक समय से किया जा रहा है। कीटनाशकों के खाद्य पदार्थो में अवशेष पर विभिन्न शोध किये जा चुके हैं और उनके परिणाम हमारे उत्पादकों एवं उपभोक्ताओं की लिए चिंताजनक है। विभिन्न खाद्य पदार्थो की नमूनों में अवाँछनीय रूप से कीटनाशक अवशेष पाए गए हैं।

(i) **फल एवं सब्जियाँः–** कीटनाशकों के हानिकारक प्रभाव पर गठित समित ने केंद्रीय खाद्य प्रसंस्करण शोध संसथान, मैसूर से संग्रहित आलू नमूनों में डी०डी०टी० का अवशेष 01–169 पी०पी०एम० तक पाया गया। भल्ला ने पंजाब से संग्रहित भिंडी के नमूनों में एन्ड्रिन का अवशेष 0-38 पी०पी०एम० तक पाया। हैदराबाद के संग्रहित सब्जियों की 83 नमूनों में से 58 कीटनाशकों से सन्दूषित पाए गए। इनमें डी०डी०टी०, एन्ड्रिन, लिंडेन, हेप्टाक्लोर एवं क्लोरडेन प्रमुख थे। अन्य वैज्ञानिकों ने देश की विभिन्न भागों से संग्रहित सब्जियों बैंगन,टमाटर,गाजर,मूली, बंदगोभी, फूलगोभी तथा अन्य सब्जियों में भी कीटनाशक अवशेष पाए गए हैं। अंगूर तथा बेर के फलों में ओर्गनोफॉस्फेट कीटनाशकों के अवशेष 2 से 5 पी०पी०एम० तक पाया गया है।

(ii) **धान्य एवं दालेंः–** धान्य एवं दालों के देश के विभिन्न भागों से संगृहीत नमूनों में डी०डी०टी०, लिंडेन, बी०एच०सी०,एंड्रिन, प्रमुख थे। पंजाब कृषि विश्वविद्यालय द्वारा किये गए सर्वेक्षण में गेहूँ के 29 में से 12 नमूनों में में डी०डी०टी० अथवा बी०एच०सी० के अवशेष पाए गए हैं। इससे यह प्रतीत होता हैं कि धान्य एवं दालें कीटनाशक के अंतर्ग्रहण का प्रमुख स्रोत हैं।

(iii) **तिलहन फसलें एंव तेलः–** देश के विभिन्न भागों जैसे हैदराबाद, पश्चिमी एवं दक्षिणी भागों से संगृहीत नमूनों में से मूंगफली में डी०डी०टी० का अवशेष पाया गया है । कपास के बीजों में मोनोक्रोटोफॉस, फेनीट्रोथिऑन, सिट्रोलान, डाईमेथोएट, और फोस्फोमिडऑन के अवशेष नहीं पाए गए जबकि कार्बारिल एवं एंड्रिन के अवशेष पाए गए हैं। मूंगफली की फसल में बी०एच०सी० एवं डी०डी०टी० के मृदा में उपयोग से उनका अवशेष तेल में भी पाया गया है। पंजाब के वानस्पतिक तेल के नमूनों में में बी०एच०सी० एवं डी०डी०टी० के अवशेष पाए गए हैं।

(iv) **प्रसंस्कृत खाद्यः–** विभिन्न प्रसंस्कृत खाद्यों में डी०डी०टी० के अवशेष पाए गए हैं।

(v) **पशु आहार : –**पशु आहार में कीटनाशक अवशेष की जानकारी अतिआवश्यक क्योंकि इसके द्वारा यह अण्डा, दूध और माँस में भी पहुंच सकता हैं। वैज्ञानिकों द्वारा किये गए शोध से यह पता चला है कि पोल्ट्री आहार, सूखा चारा, चारा (जई, बरसीम, लूसर्न, मक्का आदि) में डी०डी०टी० के अवशेष पाए गए हैं। पशु आहार के नमूनों में चने की खली, गेंहूँ के भूसे में डी०डी०टी० के अधिक अवशेष पाए गए हैं, जबकि दलहनों की खली में इसके कम अवशेष पाए गए है।

(vi) **दुग्ध एवं दुग्ध पदार्थः**–दूध के विभिन्न नमूनों में डी०डी०टी० और बी०एच०सी० का अवशेष निर्धारित मानक से अधिक पाया गया है। पंजाब के 99 नमूनों में डी०डी०टी० अवशेष निर्धारित मानक से अधिक पाए गए।

(vii) **अण्डा और माँसः–** अंडे और माँस के नमूनों में कीटनाशक अवशेष पाए गए हैं। गाय, भैंस और बकरी में 5 से 10 साल की उम्र तक के जानवरों में डी०डी०टी० के अवशेष पाए गए। पँजाब से संग्रहित सूअर, चूजों, भेड़, बकरी और अण्डों के नमूनों में डी०डी०टी० के अवशेष पाए गए हैं।

3. **कीटनाशकों का जीव जन्तुओं पर प्रभावः–** कीटनाशकों के दुष्प्रभावों को देखते हुए बहुत से देशों में इनका उपयोग जैव संरक्षण अधिनियम के अंतर्गत नियंत्रित किया जाता है। कीटनाशक जीवों के भोजन स्रोत को संदूषित और नष्ट करके उन्हें प्रभावित करते हैं जिससे वे अपना भोजन बदलने या दूसरी जगह जाकर उसे खोजने पर विवश हो जाते हैं। कीटनाशक अवशेष खाद्य श्रृंखला में जाकर पँछियों को प्रभावित भी करते हैं जब वे कीटों और केचुओं को खाती हैं । कीटनाशक मृदा में उपस्थित केचुओं की वृद्धि एवं विकास पर बुरा प्रभाव डालते हैं। अमेरिका की वन्य जीव सेवाओं के अनुमान के अनुसार हर साल लगभग 72 मिलियन पँछियों की मृत्यु कीटनाशकों की वजह से होती हैं। यूरोप में 116 पँछियों की प्रजातियाँ खतरे में हैं। पँछियों की सँख्या कीटनाशकों के उपयोग एवं उससे उपचारित क्षेत्र पर निर्भर करती हैं । डी०डी०टी० के उपयोग से पँछियों के अण्डो का खोल पतला होने का भी वर्णन मिलता हैं। कुछ कीटनाशक दाने के रूप में उपलब्ध है जिसको वन्य जीव भोजन के दाने समझ कर खा लेते हैं, जो इनकी मृत्यु का कारण बनते हैं । मछलियाँ एवं अन्य जलीय जीव भी कीटनाशकों से प्रदूषित जल द्वारा प्रभावित होते हैं। कीटनाशक अपवाह द्वारा नदियों, धाराओं में पहुंच कर जलीय जीवों के लिए हानि पँहुचाते हैं, कभी–कभी यह इनकी मृत्यु का कारण भी बनते हैं । खरपतवारनाशकों के प्रयोग से जल स्रोतों में मछलियाँ एवं अन्य जलीय जन्तु पर बुरा प्रभाव पड़ता है और ये मर जाते हैं। कीटनाशक जल में रहने वाले सूक्ष्म जंतुओं को नष्ट कर देते हैं जो मछलीयों का प्रमुख भोजन हैं। पिछले कई दशकों से उभयचर जीवों की सँख्या तेजी से पूरे विश्व में घट रही है, इसके पीछे बहुत से कारण है लेकिन उनमे कीटनाशक उपयोग भी प्रमुख हैं। कीटनाशक प्रायः मेंढक और उनके बच्चों के लिए हानिकारक पाए गए हैं। क्लोरीन कीटनाशक मेंढक में व्यावहारिक एवं वृद्धि विषमता उत्पन्न करते हैं।

4. **कीटनाशकों का मानव स्वस्थ्य पर प्रभावः**– कीटनाशक मानव के शरीर में धूल, वाष्प एवं एरोसोल के रूप में श्वसन के द्वारा प्रवेश करते हैं। इसके अतरिक्त संदूषित खा द्य, जल और त्वचा के स्पर्श में आने से भी प्रवेश करते हैं। इनका मानव पर प्रभाव इनकी विषाक्तता और अनावरण के समय पर निर्भर करता है। कृषि फार्म पर कार्य करने वाले मजदूर इनके अधिक संपर्क में आते है। बच्चे, प्रौढ़ मनुष्यों की अपेक्षा अधिक संवेदनशील होते हैं। कीटनाशकों के अनावरण से जन्मदोष, ट्यूमर, अनुवांशिक परिवर्तन, तंत्रिका रोग अन्तःस्रावी विच्छेद और अंत में इससे मृत्यु तक हो सकती है। डी०डी०टी० एवं इसका विघटन

पदार्थ डी०डी०ई० महिलाओं में मासिक धर्म को प्रभावित करता है जो बाद में स्तन कैंसर का कारण भी बन सकता है। इसके अतरिक्त प्रत्यक्ष अनावरण से केरल में 1958 में 100 लोगों की मृत्यु पैराथीओन संदूषित गेहूँ का आंटा खाने से हो गयी थी। भोपाल में भोपाल गैस त्रासदी भी इसका एक प्रत्यक्ष उदाहरण है जिसमे लगभग 8000 हजार से अधिक लोगों और 15000 से अधिक जानवरों की मृत्यु हो गयी थी । इसके चिरकालिक दुष्प्रभाव आज भी वह रहने वाले लोगो पर देखे जा सकते हैं। केरल के कैसरगड़ क्षेत्र में काजू के बागान में एण्डोसल्फान कीटनाशक के हवाई छिड़काव से वहाँ की जैव विविधता पर बुरा प्रभाव पड़ा है। वहाँ पर रहने वाले लोगों में जन्मजात विकार एवं कैंसर जैसे भयंकर रोग उत्पन हो रहे हैं। इसके अतरिक्त मछलियों, मधुमक्खियों, मेढ़कों, पँछियों, चूजों और गायों की मृत्यु भी देखी गयी है। इसको देखते हुए उच्चतम न्यायलय ने एण्डोसल्फान के उपयोग, उत्पादन को तत्काल प्रभाव से बंद करने का निर्णय सरकार को दिया है। असम के बराक घाटी में बैंगन प्रमुखतः से उगाई जाने वाली फसल है। यहाँ पर किये गए शोध से पता चला है कि बैंगन कि फसल पर कीटनाशकों के उपयोग से वहाँ के किसानों में विभिन्न प्रकार के रोग देखे गए हैं। इस क्षेत्र के किसान प्रमुख रूप से क्लोरीन, ओर्गनोफॉस्फेट एवं कार्बामेट कीटनाशकों का उपयोग करते है, जिनके उपयोग से आँखों में जलन, माशपेशियों की कमजोरी, सीने में दर्द, पेट की समस्यायें, कमजोरी एवं मष्तिष्क का कम विकास प्रमुख थे। इसका प्रमुख कारण उचित सावधानियाँ न अपनाना है।

5. **कीटनाशकों के अन्य हानिकारक प्रभावः–** कीटनाशकों का उपयोग कीटों में पुनरुथान और प्रतिरोधकता उत्पन्न करते हैं। इसका प्रमुख कारण कीटनाशकों के उपयोग से प्राकृतिक शत्रुओं की मृत्यु के कारण होता है। कीटनाशकों के उपयोग से न केवल प्राकृतिक शत्रुओं की सँख्या कम होती है अपितु उनकी प्रजातियों की सँख्या में भी कमी होती है। इसके अतरिक्त यह पौधों में परागण करने वाले कीटों पर भी बुरा प्रभाव डालते हैं। बंदगोभी में एंड्रिन और पैराथीओन के छिड़काव से 27 में से 22 परभक्षी और परपोषी प्रजतियाँ विलुप्त हो गयी। लिंडेन के मांहू के नियंत्रण में प्रयोग करने से हेलिओथिस और टेट्रानिकस का प्रकोप अधिक देखा गया। इसका प्रमुख कारण संभवतः इनके प्राकृतिक शत्रुओं का नष्ट होना है।

निष्कर्षः–

आधुनिक कृषि में कीटनाशक एक प्रमुख उत्पादक सामग्री है, जबकि यह प्रदूषण का एक प्रमुख करक है। कुछ कीटनाशक जो अधिक देर तक मृदा एवं वातावरण में विद्यमान रहते हैं उनको भारत सरकार ने प्रतिबंधित कर दिया है, उनमे से फिर भी कुछ सार्वजनिक स्वास्थ्य के कार्यों में उपयोग होते हैं। इनका उपयोग केवल सख्त निगरानी में किये जाने की आवश्यकता है तथा इसका उपयोग तभी किया जाया उचित होगा जब इसकी अत्यंत आवश्यकता हो। भविष्य में ऐसे कीटनाशकों के विकास की आवश्यकता है जो कम दर पर अधिक प्रभावी हो तथा जल्द नष्ट होने वाले हो। इसके अतरिक्त ये पर्यावरण एवं मानव स्वाथ्य के लिए भी सुरक्षित हो।

हाइटेक बागवानी से अधिक आय और कृषक उद्यमिता का विकास

सुमित* एंव संदीप यादव

बी. एसी. (कृषि), कृषि विज्ञान एंव संबद्ध उद्योग संकाय
रामा विश्वविद्यालय, कानपुर, उत्तर प्रदेश
***ई मेलः-** sumitagnihotri62627@gmail.com

परिचयः–

सब्जियों की खेती से फायदा लेने के लिए बेमौसमी खेती ही एक मात्र विकल्प है। सब्जियों की खेती विशिष्ट मौसम में की जा सकती है। जो सब्जियाँ ग्रीष्म ऋतु की होती है, उन्हें मार्च से सितम्बर तक उगाया जा सकता है एवं शीत ऋतु की सब्जियाँ अक्तूबर से फरवरी तक उगायी जा सकती है। ऐसे में इन सब्जियों की भरपूर पैदावार होने के बावजूद भी किसान को यथोचित लाभ नहीं मिल पाता है। बेमौसम में इन सब्जियों की खेती सामान्य रूप से नही की जा सकती है, क्योंकि तापमान एवं जलवायवीय कारक अनुकूल नहीं होते एवं वांछित पैदावार नहीं मिल पाती है।

हाइटेक बागवानी के नये एवं आधुनिक आयामों से सब्जियों की बेमौसमी खेती करके अच्छी पैदावार लेने के साथ साथ सब्जियों की कीमत भी अच्छी मिल जाती है। हाइटेक बागवानी के अन्तर्गत पॉलीहाउस, छाया–गृह, लौट–नल, नेट–हाउस एवं वाकिंग टनल इत्यादि कुछ ऐसे विकल्प हैं, जिसमें मुख्य मौसम से परे सब्जियों की खेती सफलता पूर्वक की जा सकती है। इन सरंचनाओं से तापमान और आर्द्रता को नियंत्रण करके पौधों को उनके अनुकूल वातावरण दिया जाता है, जिससे पौधे अपने मुख्य मौसम की तरह वृद्धि और विकास करते है। इस तरह से संरक्षित वातावरण में खेती से पैदावार तथा गुणवत्ता कई गुना बढ़ाई जा सकती है। इसके अलावा बागवानी उत्पादों के निर्यात से विदेशी मुद्रा अर्जित करने की संभावना में बढ़ जाती है।

राष्ट्रीय बागवानी मिशन के तहत एक क्रान्ति के रूप में बागवानी विकास अथवा उद्यमिता विकास किया जा रहा है, नई नई तकनीकों को किसानों तक पहुँचाया जा रहा है तथा इसके लिए वित्तीय सहायता सरकार के द्वारा किसानों को दी जा रही है। आजकल बागवानी के क्षेत्र में विकसित कुछ तकनीक जैसे – प्लान्ट टिशू कल्चर, खेती सद्यन प्रणाली, मृदा विहीन खेती (हाइड्रोपोनिक) तथा पॉलीहाउस प्रणाली उद्यानिकी की प्रमुख उच्च प्रौद्योगिकी है। इन सभी तकनीक से बागवानी क्षेत्र में बहुत बदलाव आया है। 1.

1. ऊतक संवर्धनः–

पादप टिशू कल्चर एक ऐसी तकनीक है जिसके द्वारा कोशिका, ऊतक, अंगो और यहाँ तक कि पूरे पौधे को अपनी इच्छानूसार पूरे साल मौसम सम्बन्धी सीमाओं से परे, प्रयोगशाला में उगाया जा सकता है। इस तकनीक से कम रोगयुक्त तथा उत्तम गुणवत्ता के पौधों की बढ़ती माँग ने टिशू कल्चर और सूक्ष्म प्रजनन के क्षेत्र में स्वरोजगार की संभावनाओं को चार चाँद लगा दिये है। इस विधि द्वारा तैयार पौधों की निर्यात की भी अच्छी क्षमता है।

2. सघन पौध रोपण प्रणालीः–

सघन पौधरोपण प्रणाली से यह तात्पर्य है, जिसमें एक या एक से अधिक फसलें प्रति इकाई क्षेत्र में परम्परागत विधि से अधिक पौधरोपण कर भूमि, प्रकाश, पानी व पोषक तत्वों का उपयोग किया जाता है।

इस पौध रोपण प्रणाली में फल वृक्षों की संख्या 500 से 100000 हो सकती है।

पौध रोपण प्रति हेक्टयर के आधार पर इसे निम्न समूह में विभाजित किया जा सकता है –

1.	मध्यम सघन पौध रोपण	500–1500	पौध प्रति हेक्टयर
2.	ईष्टतम सघन पौध रोपण	1500–10000	पौध प्रति हेक्टयर
3.	अति सघन पौध रोपण	10000–100000	पौध प्रति हेक्टयर

सघन बागवानी से लाभः–

1. पारम्परिक पौध रोपण (150–200 पौध प्रति हेक्टयर) की जगह सघन बागवानी में 500 से 1 लाख पौधे प्रति हेक्टर प्रति इकाई क्षेत्र में लगा सकते है, जिससे जहाँ उत्पादकता 15 से 20 टन प्रति हेक्टर होती थी वहीं सघन रोपण से 30 से 50 टन प्रति हेक्टर होती है।
2. पारम्परिक विधि में प्रति पौधा आकार ज्यादा बड़ा होने से सूर्य का प्रकाश हर भाग में पहुँचना आसान नहीं होता, वहीं सघन रोपण में उचित कटाई–छंटाई अपनाने से पौधें के हर हिस्से को सूर्य का उचित प्रकाश मिलता है जिससे अच्छी गुणवत्ता वाली आदर्श उपज प्राप्त होती है।
3. पारम्परिक विधि में फलों की तुड़ाई हाथ से करने पर समय व लागत अधिक आती है वहीं सघन प्रणाली में मशीनों द्वारा कम समय व लागत में तुड़ाई हो जाती है।
4. पारम्परिक विधि से बाग की व्यवसायिक उपज 7–8 साल पर आती है जबकि सघन रोपण में 5–6 साल पर उपज आ जाती है।

3. ग्रीन हाऊस तकनीक

ग्रीन हाऊस तकनीक, उच्च उत्पादकता के आधार पर कम क्षेत्र से अधिक उत्पादन उपलब्ध करने में सक्षम है। पॉली हाऊस में सब्जियों में प्रमुखतया खीरा, विभिन्न प्रकार की शिमला मिर्च एवं टमाटर की खेती लाभप्रद है जबकि फूलों में जरबेरा, कोर्नेशन एवं गुलाब अत्याधिक लाभप्रद सिद्ध हुए है।

पॉली हाऊस के भीतर वातावरण बाहर के वातावरण से भिन्न रहता है। बिना किसी नियंत्रण के प्रणाली वाले पॉली हाऊस के अन्दर का तापमान बाहरी तापमान से 5–10 डिग्री से ज्यादा रहता है, जबकि पूर्ण रूप से नियंत्रण वाले पॉली हाऊस में तापमान, नमी, प्रकाश आदि फसल की आवश्यकतानुसार निर्धारित किए जाते है। ऐसे हरित गृह का खर्चा अधिक तथा रख –रखाव भी कठिन होता है। परन्तु इनमें मनचाही फसल किसी भी मौसम में उगाई जा सकती है। पॉली हाऊस तकनीक से प्रति इकाई क्षेत्रफल उत्पादन (4–5 गुना) अधिक मिलता है। साथ ही बेमौसमी फल सब्जियाँ और फूलों की कीमत भी अच्छी मिलती है। इस तकनीक से प्राप्त उत्पादन की गुणवत्ता उच्च कोटि की होती हैं। इस पद्धति को अपनाकर शिक्षित युवा रोजगार प्राप्त कर अच्छा धन अर्जित कर सकते है। किसानों को ग्रीन हाऊसों की स्थापना के लिए राज्य सरकारों द्वारा अनुदान दिया जा रहा है। इस योजना का फायदा उठाकर ग्रीन हाऊसों में बेमौसमी सब्जी का उत्पादन करके सरंक्षित खेती की जा सकती है।

भारतीय संदर्भ में ग्रीन हाऊस का भविष्यः–

अपने देश में कुछ विशिष्ट उत्पादन के लिए ग्रीन हाउस प्रणाली काम में ली जा सकती है –

1. **समस्याग्रस्त कृषि जलवायु क्षेत्रों में खेती :** भारत में 750 लाख हेक्टर भूखंड ऊसर, कृषि की दृष्टि से व्यर्थ, परती, रेगिस्तान और अत्यधिक ठंड जैसी परिस्थितियों से प्रभावित हैं। इन क्षेत्रों में यदि ग्रीन हाउस तकनीकी का उपयोग किया जाये तो स्थानीय लोगों के लिए अच्छी पैदावार की जा सकती है।
2. **बड़े शहरों के आस पास कृषि उत्पादन :** बड़े शहरों में ताजी सब्जी, फल और सजावटी पौधों की पूरे साल माँग रहती है। इसे पूरा करने के लिए ग्रीनहाउस तकनीकि को बढ़ाया जाना चाहिए।

3. **निर्यात के लिए कृषि उत्पादन :** विदेशी व्यापार घाटे को कम करने के लिए अंतर्राष्ट्रीय बाजार में बागवानी उत्पादों का अच्छा निर्यात किया जा सकता है। उपयुक्त स्थानों का चयन कर निर्यात योग्य फसलों का ग्रीन हाऊस में उत्पादन कर विदेशी मुद्रा कमाई जा सकती है।
4. **पौधों का संवर्धन :** पौधा उगाना और कटिंग जैसी विशेष विधाओं के लिए नियंत्रित वातावरण की आवश्यकता पड़ती है। ग्रीनहाऊस का उपयोग कर पौधों की गुणवत्ता बढ़ाई जा सकती है।
5. **जैव तकनीकी का आधार :** जल संवर्धन पद्धति और पोषक फिल्म तकनीकों के अध्ययन में ग्रीन हाउस द्वारा वायुमंडल का नियंत्रण आवश्यक है। फसल उत्पादन के लिए भी यह आवश्यक है।
6. **दुर्लभ और औषधीय पौधों का उत्पादन :** भारत में आर्किड और जड़ी– बूटियों की ढेर सारी प्रजातियां है। इनके सघन उत्पादन में भी ग्रीन हाउस तकनीकी महत्वपूर्ण है।

पॉलीहाऊस के रख–रखाव के लिए महत्वपूर्ण निर्देश:

1. पॉलीहाऊस में दिये जाने वाले सिंचाई जल की ई.सी. 0.7 से कम तथा मृदा का पी.एच. 8 से कम होना चाहिए।
2. पॉलीहाऊस के चारों तरफ 1.5 फीट गहरी ट्रेंच बनानी चाहिए, जिससे बारिश का पानी एकत्र नहीं होगा एवं कई प्रकार के मृदा जीव पॉलीहाऊस में नहीं आ पायेंगे।
3. पॉलीहाऊस में किसी भी प्रकार का छेद हो अथवा पॉलीथिन एवं इन्सेक्ट नेट फट जाये तो तुरन्त ठीक करना चाहिए।
4. पॉलीहाऊस में कम से कम अथवा आवश्यकतानुसार ही आवागमन होना चाहिए एवं एन्टी चेम्बर दरवाजा एवं मुख्य द्वार दोनों साथ नहीं खोलने चाहिए।
5. मुख्य दरवाजे पर एक ट्रे में कॉपर सल्फेट रखना चाहिए एवं प्रवेश करने से पूर्व पैरों को कॉपर सल्फेट की ट्रे में साफ करके ही अन्दर जाना चाहिए।
6. ड्रिप प्रणाली को फसल लगाने से पूर्व उपचारित करना चाहिए एवं नालियाँ जाम हो जाये तो उन्हें तनु अम्ल से उपचारित किया जाना चाहिए।
7. फसल लगाने से पूर्व क्यारियों को निर्जमीकृत किया जाना चाहिए।
8. क्यारियों की चौड़ाई एक मीटर एवं ऊँचाई 45 से.मी. रखनी चाहिए।
9. दो क्यारियों के बीच 60 से.मी. का आवागमन पथ रखना चाहिए।
10. एक फसल पूरी होने से पहले ही दूसरी फसल की तैयारी शुरू कर देनी चाहिए, जैसे पौधे तैयार करना आदि।
11. पॉलीहाऊस में सघन कृषि प्रणाली अपनानी चाहिए, कभी भी पॉलीहाऊस एक सप्ताह से ज्यादा खाली नहीं रखना चाहिए।
12. पॉलीहाऊस में उगाई जाने वाली फसलों का चुनाव बाजार को ध्यान में रख कर करना चाहिए एवं अधिक मूल्य वाली फसलों का ही चयन करना चाहिए।
13. उगाई जाने वाली किस्में अधिक उत्पादन देने वाली एवं अधिक गुणवत्ता वाली होनी चाहिए।
14. इसके अन्दर किसी प्रकार का कचरा, पुरानी फसलों के अवशेष एवं खरपतवार नहीं होनी चाहिए।
15. पॉलीहाऊस को खाद, बीज, औजारों के भण्डार गृह की तरह इस्तेमाल नहीं करना चाहिए।
16. पॉलीहाऊस में तापमान एवं आर्द्रता का विशेष ध्यान रखना चाहिए, समय समय पर आवश्यकतानुसार फोगर्स एवं पर्दे के उपयोग से इनका नियंत्रण करते रहना चाहिए।
17. किसी भी कीट अथवा बीमारी का प्रकोप होने पर तुरन्त उसके नियंत्रण पर ध्यान देना चाहिए, क्योंकि पॉलीहाऊस के अन्दर कीट एवं बीमारियाँ बहुत जल्दी विकराल रूप लेती है।

सदस्यता फार्म

नवीन पंजीकरण ☐		सदस्यता नवीनीकरण ☐	
सदस्यता :– ..... दिनांक से ..... तक			
	वार्षिक		जीवन सदस्यता*
व्यक्तिगत	☐ 450/– राशि मूल्य	☐	3500/– राशि मूल्य
संस्था हेतू	☐ 650/– राशि मूल्य	☐	5500/– राशि मूल्य

*एक जीवन सदस्य 10 वर्षों के लिए असीमित संख्या में लेख प्रकाशित कर सकता है

==========

(कृपया नवीन पंजीकरण अथवा सदस्यता नवीनीकरण को फार्म में स्पष्ट चिंहित करें।)

==========

किसाान पत्रिका नवीन पंजीकरण अथवा सदस्यता नवीनीकरण हेतु पत्र व्यवहार पता:–

नाम:– .....

स्थायी पता:– .....

.....

.....

पत्र व्यवहार का पता:–.....

.....

.....

ईमेल:– मोबाइल नं.:–

❖ सदस्यता शुल्क जमा करने हेतू :–

(*NEFT/RTGS/DD in favour of*)

खाताधारक का नाम (A/c Name) :– **Rama University, Uttar Pradesh**

खाता संख्या (A/c No.) :– **007388700000931** बैंक का नाम (Bank name) :– **YES BANK Ltd.**

शाखा का नाम (Branch) : **Civil Lines, Kanpur** IFSC कोड :– **YESB0000073**

लेख प्रस्तुतीकरण एंव प्रतिलिप्याधिकार हस्तांतरण प्रपत्र
(Article Submission and Copyright Transfer From)

प्रति,

प्रधान संपादक,
किसान पत्रिका,
कृषि विज्ञान एंव संबद्ध उद्योग संकाय,
रामा विश्वविद्यालय, कानपुर,
उत्तर प्रदेश

विषय :– लेख प्रस्तुतीकरण हेतु (Article Submission)

लेख का प्रकार :–

फसल उत्पादन	☐	**जैविक खेती**	☐
कीट एंव रोग प्रबंधन	☐	**नवीन कृषि प्राणलीयॅा**	☐
फसल विपणन	☐	**कृषि प्रसार एंव अन्य**	☐

(कृपया लेख के प्रकार को फार्म में स्पष्ट चिंहित करें।)

लेख का शीर्षक :– .....

.....

लेखक द्वारा घोषित किया जाता है कि उपरोक्त पांडुलिपि जिसे किसान पत्रिका में लेख के लिए प्रस्तुत किया गया है, अन्यत्र किसी भी पत्रिका में प्रकाशित होने के लिए नहीं भेजा गया है। इस पांडुलिपि (संदर्भ या अन्यथा) का कोई भी हिस्सा शब्दशः कॉपी नहीं किया गया है।

मैं / हम किसी भी मीडिया (प्रिंट, इलेक्ट्रॉनिक और किसी भी अन्य) में किसान पत्रिका में लेख प्रकाशन सहमति देता हूँ / देते हैं और इसके प्रकाशन की स्थिति में किसान पत्रिका को सभी प्रतिलिप्याधिकार हस्तांतरित करते हैं। मैंने / हमने पांडुलिपि के अंतिम संस्करण को पढ़ा है और इसमें जो कहा गया है, उसके लिए मैं जिम्मेदार हूं। पांडुलिपि में वर्णित कार्य / लेख मेरा / हमारा अपना है और इस काम/ लेख के लिए मेरा व्यक्तिगत योगदान काफी महत्वपूर्ण है। लेख में महत्वपूर्ण योगदान देने वाले किसी भी व्यक्ति को लेखकों से वंचित नहीं किया गया है और जिन लोगों ने मदद की है उन्हें विधिवत स्वीकार किया गया है। मैं / हम निम्नलिखित अनुक्रम में लेख के लेखन से भी सहमत हैं:

क्रंमाक	लेखक कें नाम	सदस्यता संख्या	पदनाम एंव पता	हस्ताक्षर

मैंने उपर्युक्त जानकारी की जाँच की है और सही पाया है और इस संबंध में प्रत्येक जिम्मेदारी मेरी स्वंय की है।

हस्ताक्षर
(संवाद लेखक / Communicating Author)

लोकप्रिय लेख प्रकाशन नीति रूप

लेख प्रस्तुत करने के लिए दिशानिर्देश :–

1. प्रति वर्ष चार लेख, मुख्य लेखक के रूप में प्रकाशन के लिए पंजीकृत किए जा सकते हैं।
2. लेख में सहभागिता लेने वाले अन्य लेखको का पत्रिका में सदस्ता होना आवश्यक है।
3. प्रत्येक अंक में केवल एक लेख मुख्य एंव सहयोगी लेखक के रूप पंजीकृत किया जाएगा।
4. लेख प्राप्ति और स्वीकृति के अनुक्रम के आधार पर कड़ाई से प्रकाशित किए जाते हैं।
5. **पृष्ठ सीमा :** अधिकतम 3 पृष्ठ
6. **फान्ट :** Kruti Dev 010
7. प्रस्तुत लेख : ऑनलाइन
8. लेख को प्रकाशन हेतू प्रधान संपादक के ईमेल आई.डी. ramakisanpatrika.editor@ramauniversity.ac.in में **Copyright Transfer Form** के साथ संल्गन करके भेजें।
9. एक बार लेख को अस्वीकार कर देने के बाद प्रकाशन के लिए कभी विचार नहीं किया जाएगा।

संपादकीय नीति

1. पत्रिका में प्रकाशन के लिए प्रस्तुत एक पांडुलिपियों (एम.एस) के सभी लेखकों को पत्रिका का सदस्य होना चाहिए और प्रकाशन के समय उनकी सदस्यता की अवधि वैध होनी चाहिए।
2. कृपया पूर्ण लंबाई लेख न भेजें, केवल 2–3 पृष्ठों में लेख लिखें।
3. पांडुलिपि मूल होनी चाहिए और कृषि और जैविक विज्ञान ज्ञान की उन्नति में महत्वपूर्ण योगदान देना चाहिए।
4. पांडुलिपि में अप्रकाशित लेख होना चाहिए और दो साल से अधिक पुराना नहीं होना चाहिए और प्रकाशन के लिए कहीं और (पूर्ण या आंशिक रूप से) प्रस्तुत नहीं किया जाना चाहिए।
5. टेबल और चित्र को स्कैन न करें, इस तरह के लेख खारिज कर दिए जाएंगे।
6. पत्रिका की समग्र आवश्यकता के संदर्भ में अनुपयुक्त पाए गए लेखों को अस्वीकार कर दिया जाएगा।
7. कृपया प्रस्तुत करने से पहले प्रत्येक लेख के साथ लेख जमा, घोषणा, और कॉपीराइट हस्तांतरण फॉर्म भरें।

लेख प्रारूप (Article Format)

शीर्षक : .....(फॉन्ट साइज 24 एंव बोल्ड)

लेखक/लेखकों के नाम ([1]राहुल सिंह राजपूत एंव [2]डॉ. एच.बी. सिंह, फॉन्ट साइज 18 एंव बोल्ड)

पता : [1]सहायक प्राध्यपक, रामा विश्वविद्यालय, कानपुर

[2]पूर्व व्याख्यता, कवक एवं पादप रोग विज्ञान विभाग, कृषि विज्ञान संस्थान,

काशी हिन्दू विश्वविद्यालय,वाराणसी, उत्तर प्रदेश

(फॉन्ट साइज 14)

***ई मेल:-** abc1223@gmail.com

मुख्य शीर्षक/ हैडिंग – फॉन्ट साइज 16 एंव बोल्ड, जैसे : परिचय :–

उप शीर्षक/ सब हैडिंग – फॉन्ट साइज 14 एंव बोल्ड

स्पेसिंग :– 1.5

पाठ्य संरेखण (Text Alignment) - Justify

टेबल फॉर्मेटिंग :– मध्य (Centre)

चित्र फॉर्मेटिंग :– मध्य (Centre)

Agricultural Economics at your Finger Tips

For JRF, SRF, NET, SLET, Civil Services and
Other Competitive Examinations

Jitendra Ojha

Yashi Mishra

Deepankar Tiwari

ISBN 9789353357108

9 789353 357108

` 290 US$ 7

Published by
AkiNik Publications,
169, C-11, Sector - 3, Rohini,
Delhi - 110085, India
Toll Free (India): 18001234070